: शिक्षा—महिमा :

सबसे प्रथम कर्त्तव्य है शिक्षा बढ़ाना देशमें,
शिक्षा बिना ही पड़ रहे हैं आज हम सब क्लेशमें।
शिक्षा बिना कोई कभी बनता नहीं सत्पात्र है,
शिक्षा बिना कल्याण की आशा दुराशा मात्र है।

卐

स्त्री-शिक्षा का महत्व

विद्या हमारी भी न तब तक काममें कुछ आयगी।
अर्धांगियों को भी सुशिक्षा दी न जब तक जायगी।
सोचो नरोंसे नारियाँ किस बातमें हैं कम हुई।
मध्यस्थ हो शास्त्रार्थ में हैं भारती सम हुई ॥
क्या कर नहीं सकतीं भला यदि शिक्षिता हों नारियाँ।
रणरङ्गराज्य सुधर्म रक्षा कर चुकीं सुकुमारियाँ ॥

—卐—

॥ ॐ अर्हम् ॥

श्री आवश्यक-सूत्र सार्थ

सामायिक प्रतिक्रमण-सूत्र शब्दार्थ सहित

(सामायिक, प्रतिक्रमण, प्रथमा का पाठ्यग्रंथ)

— प्रकाशक

* मंत्रीगण-पुस्तक प्रकाशन विभाग *

श्री तिलोक रत्न स्था. जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड,

पाथर्डी (अहमदनगर)

षष्ठ संस्करण ५००० प्रति { वीर सं. २४९६

मूल्य १ - ५० पैसे { वि. सं. २०२७

मुद्रक-पं. बदरीनारायण शुक्ल, श्री सुधर्मा मुद्रणालय,

८१० मंत्री गली, पाथर्डी (अहमदनगर)

निवेदन

धर्मप्रेमी वन्धुओं ! श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यश्री १००८ श्री आनन्द-ऋषिजी महाराज आदि ठाणे ३ का चातुर्मास सं. १९९२ वीर संवत् २४६२ में पूना के अन्दर हुवा। उस समय श्री तिलोक रत्न स्थानकवासी जैन धार्मिक परीक्षा वोर्ड पाथर्डी के परीक्षामन्त्री (रजिस्ट्रार) विद्यावारिधि स्व० पं० राजधारी त्रिपाठीजी शास्त्री की देख-रेख में आवश्यक-सूत्र सार्थ की प्रथम आवृत्ति श्री चांदमलजी सोभाचन्दजी वोरा पीपला श्री हीरा-लालजी किसनदासजी गांधी पाथर्डी, श्री गोटीरामजी दौलतरामजी सुराणा आदि श्रीसंघ राहुरी, श्री रूपचन्दजी मोतीलालजी गुन्देचा चांदा, श्री नथमलजी फूटरमलजी वलदोटा पूना, श्री सूरजमलजी जेठमलजी चोरडिया वाघली और श्री गोविन्दरामजी चुनीलालजी मुथा वोदवड़ की तरफ से, तथा आवश्यक-सूत्र मूल की प्रथम आवृत्ति श्री उत्तमचन्दजी रतनचन्दजी भटेवडा राहू पिपळगांव, श्री चुन्नीलालजी धनराजजी गांधी खड़की, श्री कालूरामजी खेमचन्दजी सिंगी आदि श्रीसंघ घोडनदी, श्री आनन्दरामजी गुन्देचा अहमदनगर तथा श्री देवीचन्दजी विरदीचन्दजी वलदोटा कलम की तरफ से और सामायिक-सूत्र सार्थ की प्रथम आवृत्ति श्री लालचन्दजी मिश्री-लालजी वलदोटा खड़की, श्री गोटीरामजी दौलतरामजी सुराणा आदि श्रीसंघ राहुरी की तरफसे इस प्रकार तीनों पुस्तकों की कुल करीव ११००० प्रतियाँ उपरोक्त शिक्षण प्रेमी, धर्मप्रचारक दानवीरों की तरफ से प्रका-शित होकर श्री रत्न जैन पुस्तकालय, पाथर्डी को समर्पित की गई थी। उस जमाने में पुस्तकें स्वल्प व्यय में प्रकाशित हुई थीं जो बहुत दिनों तक लागत मूल्य में पुस्तकालय की तरफ से आप महानुभावों की सेवा में भेजी गई।

हमें यह हृदय से स्वीकारना होगा कि पुस्तकालय के इस सहयोग से वोर्ड के कार्य में विशेष सहूलियत मिली है। इसके लिये श्री रत्न जैन पुस्तकालय, पाथर्डी के संचालकों का हम हृदय से आभार मानते हैं और उपरोक्त दानवीरों को कोटिशः धन्यवाद देते हैं, क्योंकि उनके सहयोग से

पुस्तकालय की सेवा के साथ-साथ परम्परया परीक्षा बोर्ड और परीक्षार्थिओं को भी विशेष सुविधा पहुँची है।

धर्मप्रेमी महानुभावों और धार्मिक शिक्षण संस्थाओं की तरफ से उक्त पुस्तकों की मांग दिन-ब दिन बढती जाने से और स्टाक में प्रतियां बिल्कुल ही शिल्लक नहीं होने से बोर्ड के सामने यह प्रश्न आवश्यकीय बन गया, जिससे कि इस भयंकर महर्घता (महँगाई) के जमाने में भी छात्रों एवं धर्मनिष्ठ श्रद्धालुओं की सुविधा के लिए सामायिक–सूत्र और आवश्यक सूत्र सार्थ का पुन: प्रकाशन परीक्षा बोर्ड को हाथ में लेना पडा। इस पुस्तक की उपयोगिता अधिक होन से द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ पंचम संस्करण भी समाप्त हो गये, अत: यह षष्ठ संस्करण पाठकों के सम्मुख है।

उक्त दोनों सूत्र सार्थ सामायिक–प्रतिक्रमण और प्रथमा परीक्षा में निर्धारित है, अत: छात्रों की सुविधा के लिए एक ही पुस्तक में इन दोनों को प्रकाशित किया गया है, लागत मूल्य में पुस्तकें देने का धोरण इन संस्थाओं का पहले से ही है। वर्त्तमान परिस्थिति में कागज अत्यन्त दुर्मिल और महँगा होने पर भी मूल्य में थोडा सा अन्तर किया गया है। पाठकवृन्द एवं जिज्ञासु छात्रगण इस पुस्तक से जितना लाभ उठायेंगे उतना ही हम अपने श्रम को सफल समझेंगे।

卐 卐 卐

शोभाचन्द्र भारिल्ल, चन्द्रभूषण मणि त्रिपाठी, बदरीनारायण शुक्ल

मन्त्रीगण

पुस्तक प्रकाशन विभाग

श्री ति. र. स्था. जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड, पाथर्डी

प्रस्तावना

श्री जिनागमोद्धारक पूज्यश्री अमोलकऋषिजी महाराज विरचित आवश्यक सूत्र की प्रस्तावना ।

सुखेच्छु जीवों की इच्छा पूर्ण करनेवाला धर्म ही है, यह धर्म विशुद्ध आत्मा में ही रह सकता है। आत्मा को विशुद्ध बनाकर धर्म स्थित करने के लिए ही धर्म कानून हुए हैं, और उनका दिग्दर्शन सिद्धान्तों द्वारा होता है। वे सिद्धान्त अनेक हैं और उनमें से मुख्य-मुख्य आवश्यकीय जिनमें व्यावहारिक तथा आत्मशुद्धि के जो जो कानून हैं, उनको मुमुक्षु प्राणी सदैव रटन, मनन निदिध्यासन द्वारा प्रवृत्ति में लाकर ऐहिक पारमार्थिक सुख संपादन करके इस लोक में विघ्नरहित और परलोक में परमानन्दी बनें, मानो इसी हेतु से सूत्र रूप याने स्वल्प शब्द और विस्तृत अर्थ वाला एक छोटा-सा सिद्धान्त निर्माण हुआ। जिसका नाम आवश्यक रक्खा गया, वही यह शास्त्र है। इसके नाम पर से ही स्पष्टतया विदित होता है कि इसमें आवश्यकीय-जरूरी बातों का संग्रह है। साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका इन चारों संघों से समाचरणीय नित्य के कर्तव्य कर्म का स्वरूप तथा उसमें जिस-जिस सम्बन्ध से दोषोत्पत्ति होने की सम्भावना है उसका संक्षिप्त में कथन सभी के समझ में आ जावे ऐसी खूबी से किया है। उक्त चारों संघों के लिए प्रथम कंठस्थ कर नित्य पाठ करने का यही सूत्र है और जिनाज्ञानुसार प्रवृत्ति करनेवाले वर्तमान समय के सब साधु-साध्वी तथा सच्चे श्रावक-श्राविका को कंठस्थ यह होता है और प्रातःकाल संध्याकाल दोनों समय नियमित वक्त पर अवश्य इसका स्वाध्याय करके अपनी आत्मा को पवित्र बनाते हैं। इसे पडिक्कमणा अर्थात् प्रतिक्रमण भी कहते हैं, उसका अर्थ यह होता है कि स्वीकृत किये हुये व्रतों में जो कोई दोष लगा हो तो उससे प्रति = पीछा + क्रमण = हटाना, अर्थात् लगे हुये दोषों का पश्चात्ताप करके आगे वैसे दोषोत्पत्ति का संबंध न होने पावे, ऐसी सावधानी रखना, इसलिये इसका पठन दोनों समय करने की जिनेश्वर भगवान की

आज्ञा है और उनका पठन करते हुये प्रमादाचरण, चित्त का विक्षेप, न हो, इस वास्ते तथा उनका भावार्थ लक्ष्यबिंदु बना रहे, अतःइसकी विधि रक्खी गई है। जैसे कि सामायिक प्रतिक्रमण के लिये स्थानांतर करते हुये जो किसी जीव की विराधना हुई हो, उसकी शुद्धि के लिये मार्ग शुद्धि का (इरिया-वहियं का) पाठ पढकर उस पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए कायोत्सर्ग करने का (तस्स उत्तरी का) पाठ कहें, कायोत्सर्ग में मार्गशुद्धि के पाठ का अर्थ चिंतन करें, कायोत्सर्ग पूर्ण करके आत्मशुद्धि की खुशाली में चौवीस तीर्थंकरों के गुणानुवाद रूप लोगस्स का पाठ कह करके शुद्ध आत्मा में सामायिक व्रत की धारणा करें और उसकी खुशाली में नम्रता से आसनस्थ हो सिद्ध और अरिहन्त भगवान् के गुणानुवाद करें। उसी तरह प्रतिक्रमण में भी प्रथम चित्त की समधारणा करने के लिये सामायिक आवश्यक के द्वारा जिसमें नमोक्कार मन्त्र से मंगलाचरण करके सामायिक के पाठ से सावद्य योग की निवृत्ति करें फिर आत्मशुद्धि के (इच्छामि ठामि) पाठ से शुद्ध होकर कायोत्सर्ग करने का पाठ कहें और जिसका प्रतिक्रमण करना है उसका अर्थात् अतिचारों का कायोत्सर्ग में चिंतन करें। कायोत्सर्ग पूर्ण होने पर फिर दूसरे चउवीसत्थव आवश्यक से देववन्दन और तीसरे वन्दना आवश्यक से गुरुवन्दन करें। यह तीनों आवश्यक प्रतिक्रमण की विधि पूर्ण-रूप कर वीरत्व के आसन से चौथा पडिक्कमण आवश्यक में प्रतिक्रमण प्रारम्भ करें, अर्थात् ज्ञान-दर्शन चारित्र (साधु के) तथा चरित्ताचरित्त (श्रावक के) और तप में उसी तरह असंयमादि सूक्ष्म वादर दोषों में दिन में, रात्रि में, पक्ष में चार महीने में तथा बारह महीने में जो-जो अतिचार दोष लगे हों, उन्हें दत्तचित्त उपयोगपूर्वक चिंतन कर पश्चात्ताप करें कि "मिच्छामि दुक्कडं" अर्थात् मेरी इच्छा बिना अनुपयोग से, तथा कारण-वशात् अटके गाडे को चलाने के लिये खराब कार्य किये हों, उन सब पापों को पश्चात्ताप द्वारा निर्मूल तथा शिथिल करके फिर प्रवचन का स्तवन कर सावधानीपूर्वक आत्मविशुद्धि का पाठ कहें, गुरु देव को, वन्दन करके प्रायश्चित्त करने के लिये पांचवे काउसग्ग आवश्यक में कायोत्सर्ग करें। इस तरह शुद्ध होकर भविष्य का आश्रव रोकने के लिए छट्ठा पच्चक्खाण आवश्यक में प्रत्याख्यान करें। भूतकाल के दोषों का प्रतिक्रमण, वर्तमान-

काल की संवर करणी (सामायिक) और भविष्यत्काल के प्रत्याख्यान रूप महालाभ से संतुष्ट होकर सिद्ध और अरिहन्त भगवान् के गुणानुवाद कर कृतार्थ बनें। उक्त छहों आवश्यक समाचरण करने का लाभ श्री उत्तराध्ययन सूत्र के २९ वें अध्ययन में इस प्रकार भगवान् ने फरमाया है। प्रथम सामायिक आवश्यक करने से सावद्य योगों से निवृत्ति होती है। द्वितीय चौवीसत्थव आवश्यक अर्थात् चौवीस तीर्थंकरों की स्तुति करने से सम्यक्त्व की विशुद्धि होती है। तृतीय वन्दना आवश्यक अर्थात् गुरु को वन्दन करने से जो नीच गोत्र में उत्पन्न होने का कर्म बन्धन किया हो तो उसका क्षय कर देता तथा उच्च गोत्र में उत्पन्न होने का कर्म उपार्जन करता है और सौभाग्य प्राप्त करता है, तथा उसकी आज्ञा निष्फल नहीं होती है अर्थात् उसका हुक्म सब प्रमाण करते हैं। इसी तरह वह जिनेश्वर भगवान् की आज्ञा का भी पालन करने वाला होता है और दक्षिण भाव अर्थात् प्रतिक्रमण करने से व्रत में जो कोई दोष रूप छिद्र हो गये हों तो उसको ढांक देता है, और व्रत में छिद्र करने वाला जो आश्रव पाप आने का मार्ग है, उसका भी निरुंधन कर देता है, उसी तरह चरित्र में लगते हुए वह दोषों से रहित होकर पांच समिति तीन गुप्तिरूप जो आठ प्रवचन माताएं हैं उनमें सावधान बनता है। असंयम कार्य से अलग रहता है और बहुत अच्छी तरह संयम धर्म में प्रवृत्ति करने वाला बनता है। पंचम काउसग्ग आवश्यक अर्थात् कायोत्सर्ग के करने से भूतकाल और वर्तमान काल में किये हुये पापों के प्रायश्चित्त की विशुद्धि करता है,। जो प्रायश्चित्त से विशुद्ध बनता है वह जीव शीतलीभूत बनकर, जिस तरह हमाल अपना वजन डालकर हलका होता है, उसी तरह वह भी पापरूपी भार से हलका होता है फिर प्रशस्त ध्यानोपेत बनकर बाह्याभ्यंतर सुख को प्राप्त कर लेता है। छट्ठा पच्चक्खाण आवश्यक अर्थात् प्रत्याख्यान-नियम-व्रत के करने से आश्रवद्वार (पाप आने का मार्ग) का निरुंधन (बंदी) करता है, उसी तरह प्रत्याख्यान के करने से इच्छा-तृष्णा का भी निरुंधन होता है। जिसने तृष्णा का निरुंधन किया ऐसा जीव, संसार में रहे हुए तमाम पदार्थों की वांछा तृष्णारूप अंगार को बुझाकर शीतलीभूत ठंडागार बन जाता है।

यह तो शास्त्रप्रमाण से छह आवश्यक करने का फल बताया। अब सामायिक तथा प्रतिक्रमण के अन्त में अरिहन्त सिद्ध की स्तुति मंगल (नमोत्थुणं) का पाठ कहने से ज्ञान, दर्शन और चारित्र इस रत्नत्रय तथा बोधि बीज सम्यक्त्वरत्न का लाभ प्राप्त करता है और जिस आत्मा को ज्ञान दर्शन चारित्र और बोधि बीजादिक का लाभ मिल गया, उसकी जो उत्कृष्ट रसायन पक्व होवे तो वह क्रिया का अंत कर देता है अर्थात् मोक्ष प्राप्त कर लेता है। कदाचित् ऐसा न बने तो वैमानिक देव में अवश्य ही अवतार धारण करता है और जिनेंद्र भगवान् की आज्ञा का आराधक होने से थोडे ही भवों में मोक्ष प्राप्त करके अजरामर अनन्त निराबाध सुख का भोक्ता बन जाता है। यह आवश्यक (प्रतिक्रमण) के प्रत्येक पाठों का पठन मनन, निदिध्यासनपूर्वक आचरण में लाने का फल श्री जिनेंद्र-प्ररूपित सिद्धांत उत्तराध्ययन सूत्र के प्रमाणों से सिद्ध कर बताया। वैसा ही कथन अन्य शास्त्रों में भी उपलब्ध होता है। इससे यह निश्चय होता है कि यह प्रतिक्रमण सब आत्महितेच्छुओं को परम आवश्यकीय आचरणीय है, ऐसा जानकर ही इसे सर्वोपयोगी बनाने के लिए यथा बुद्धि सभी तरह की सुभीता की गई है, इससे आशा करते हैं कि इसे सर्व जैनसंघ (श्रावक-श्राविकावर्ग) सप्रेम ग्रहण कर यथोचित उपयोग में लाकर लेखक का श्रम और प्रसिद्धि कर्ता का आर्थिक व्यय फलीभूत करेंगे। विज्ञेषु-इत्यलम्।

प्रस्तावना

यह सर्वजन-विदित है कि चरम तीर्थंकर श्रमण भगवान् महावीर ने स्वपर कल्याण हेतु चतुर्विध तीर्थ की स्थापना की। इस तीर्थ का अवलम्बन लेकर प्राणीमात्र अपने पाप मल को धोकर संसार सागर से पार हो सकता है। मंगलमय तीर्थ के चार अंग है-साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका। इन चार चक्रों के द्वारा यह धर्म रूपी रथ परम श्रेयस् (निर्माण) के मार्ग पर अग्रसर होता है। तीर्थनायक भगवान् महावीर ने धर्म रथ के उक्त चारों चक्रों को अस्खलित रूप से गतिमान् रखने हेतु विविध नियमोपनियमोंका प्ररूपण किया है उनमें से आवश्यक (प्रतिक्रमण) का अति महत्त्वपूर्ण स्थान है।

आवश्यक शब्द का अर्थ होता है—प्रतिदिन नियमित रूप से की जाने वाली क्रिया। जिस प्रकार शरीर निर्वाह हेतु आहार आदि क्रिया प्रतिदिन की जाती है और यह आवश्यक क्रिया मानी जाती है उसी तरह आध्यात्मिक कल्याण के लिए जिस क्रिया का प्रतिदिन किया जाना अनिवार्य है वह क्रिया आवश्यक-(प्रतिक्रमण) कही जाती है। आत्मा को निर्मल एवं नीरजस्क बनाने के लिए प्रतिक्रमण करना अत्यन्त आवश्यक है इसीलिए प्रतिक्रमण को आवश्यक जैसा सार्थक नाम दिया गया है। पापनिवृत्ति रूप आवश्यक के छह अध्ययन हैं:—सामायिक, चउवीसत्थव, वन्दना, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग, प्रत्याख्यान। इनमें प्रतिक्रमण की प्रधानता होने से व्यवहार में आवश्यक को प्रतिक्रमण कहने की प्रथा है।

साधना के पथ पर चलने वाला साधक सावधानी रखता हुआ भी यदा कदा चल विचल हो जाता है और उससे स्खलना हो जाने की संभावना रहती है क्योंकि मानव मात्र भूल का पात्र है अपनी दैनंदिन क्रियाओं में हो जाने वाली स्खलनाओं और भूलों के प्रति साधक को पूरी सावधानी और जागृति रखनी चाहिए। सायंकाल और प्रातःकाल अपनी दिनचर्या और रात्रिचर्या का पर्यालोचन करना, भूलों को याद कर भविष्य में वैसी भूलें न करने का संकल्प करना प्रतिक्रमण है। प्रतिक्रमण की व्युत्पत्ति भी यही बताती है—किये हुए पापों से-भूलों से विमुख होना प्रतिक्रमण है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रतिक्रमण सूत्र का जीवन शुद्धि के लिए कितना अधिक महत्त्व है। जीवन में आई हुई गन्दगियों को दूर कर देने के लिए यह निर्मल मन्दाकिनी है। इसमें प्रतिदिन अवगाहन कर अपने पाप मैल को धो डालना प्रत्येक मानव के लिए आवश्यक है।

चूंकि "आवश्यक" की क्रिया को भगवान् ने आवश्यक बतलाया है अतएव यह आवश्यक है कि साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका आवश्यक सूत्र को कंठस्थ और हृदयंगम करें। इसी परम उदार आशय से प्रेरित होकर इस श्रावक आवश्यक-सूत्र का प्रकाशन किया गया है। यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि इस प्रकाशन में श्रमण सूत्र के पाठ दिये गये हैं। कॉन्फरन्स ने भी जैन पाठावली में श्रमण सूत्र को स्थान दिया है। पूर्व मान्यतानुसार इसे न पढने की भावना वालों के लिये कोई आग्रह नहीं है। आत्म कल्याण के अभिलाषी व्यक्ति इसका पूरा पूरा लाभ लें यही कामना और भावना है।

— "श्रीमज्जैनाचार्य" आनन्दऋषिजी म०

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

सामायिक सूत्र सार्थ

नमोक्कार मन्त्र का पाठ।

आर्यावृत्तम्।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

अनुष्टुपवृत्तम्।

एसो पंच णमोक्कारो सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥२॥

शब्दार्थ

अरिहंताणं–अरिहन्तों को। णमो–नमस्कार हो। सिद्धाणं–सिद्धों को। णमो–नमस्कार हो। उवज्झायाणं–उपाध्यायों को। णमो–नमस्कार हो। लोए–लोक में (अढाई द्वीप में वर्तमान)। सव्वसाहूणं-सब साधुओं को। णमो–नमस्कार हो। एसो–यह। पंच णमोक्कारो–पंच नमस्कार। (पाँच परमेष्ठियों को किया हुआ नमस्कार) सव्व–सब। पाव–पापों को। पणासणो–नाश करनेवाला है। च–और। सव्वेसिं–सब। मंगलाणं–मंगलों में। पढमं–प्रथम (पहला)। मंगलं–मंगल। हवइ–है।

गुरुवन्दना 'तिक्खुत्तो' का पाठ।

तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेमि वंदामि नमंसामि सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि मत्थएण वंदामि ॥ १ ॥

शब्दार्थ

तिक्खुत्तो–तीन वार। आयाहिणं–दक्षिण तरफसे। पयाहिणं–प्रदक्षिणा। करेमि–करता हूँ। वन्दामि–गुणग्राम (स्तुति) करता हूँ। नमंसामि–नमस्कार करता हूँ। सक्कारेमि–सत्कार करता हूँ। सम्माणेमि–सन्मान देता हूँ। कल्लाणं–कल्याणरूप। मंगलं–मंगलरूप। देवयं–धर्म देवरूप। चेइयं–ज्ञानवंत (आपकी) पज्जुवासामि–सेवा करता हूँ।

तीन तत्त्वका पाठ (आर्यावृत्तम्)

अरिहंतो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं ॥११॥

शब्दार्थ

अरिहंतो-अरिहंत भगवान्। मह–मेरे। देवो–देव (हैं)। जावज्जीवं-जीवनपर्यंत। सुसाहुणो-उत्तम, (निर्ग्रंथ) साधु गुरुणो-गुरु (हैं)। जिणपण्णत्तं-जिनेंद्रकथित। तत्तं-तत्त्वधर्म (है)। इअ-इस प्रकार। सम्मत्तं-सम्यक्त्व। मए-मैंने। गहियं-ग्रहण किया है।

गुरु–गुण का पाठ (आर्यावृत्तम्)

पंचिंदिय-संवरणो, तह णवविह-बंभचेर गुत्तिधरो।
चउव्विह-कसाय-मुक्को, अट्ठारस्स गुणेहिं संजुत्तो ॥१॥
पंच महव्वय-जुत्तो, पंचविहायार-पालण-समत्थो।
पंचसमिइ तिगुत्तो, छत्तीस गुणो गुरु मज्झ ॥२॥

शब्दार्थ

पंचिंदिय–पांच इन्द्रियों को। संवरणो–वश में रक्खे। तह–वैसे ही। णवविह–नव प्रकार का। बंभचेर–ब्रह्मचर्य की। गुत्तिधरो–

गुप्ति के धारक । चउव्विह–चार प्रकारकी । कसायमुक्को–कषाय से मुक्त (कषाय पतली करी) । अट्ठारस्स–यह अठारह । गुणेहिं–गुण करके । संजुत्तो–सहित । पंचमहव्वय–पांच महाव्रत पालने वाले । पंचविहायार–पांच प्रकार के आचार । पालन–पालने को । समत्थो–समर्थ । पंचसमिइ–पांच समिति । तिगुत्तो–तीन गुप्ति से गुप्तात्मा । छत्तीस–३६ छत्तीस । गुणो–गुणयुक्त होवें । गुरुमज्झ–गुरुजी मेरे ।

इरियावहि का पाठ ।

इच्छाकारेणं संदिसह भगवं । इरियावहियं पडिक्कमामि । इच्छं इच्छामि, पडिक्कमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए, गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे, ओसा–उत्तिंग–पणग–दग–मट्टी–मक्कडा–संताणा–संकमणे, जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया,बेइंदिया तेइंदिया,चउरिंदिया,पंचिंदिया,अभिहया वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं, संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ॥१॥

शब्दार्थ–

भगवं–हे गुरु महाराज ! इच्छाकारेणं–अपनी इच्छापूर्वक । संदिसह–आज्ञा दीजिए (कि मैं)।इरियावहियं-ईर्यापथिकी क्रिया का (चलने से लगनेवाली क्रिया का) । पडिक्कमामि–प्रतिक्रमण करूँ। इच्छं–प्रमाण है । इरियावहियाए–मार्ग में चलने से होने वाली । विराहणाए–विराधना से । पडिक्कमिउं–प्रतिक्रमण करने की । इच्छामि--इच्छा करता हूँ। गमणागमणे--जाने आने में। पाणक्कमणे–किसी प्राणी को दबाया हो । बीयक्कमणे--बीज को दबाया हो ।

हरियक्कमणे--वनस्पति को दबाया हो। ओसा--ओस। उत्तिंग--कीडी नगरा। पणग--पाँच रंग की काई। दग--कच्चा पानी। मट्टी-सचित्त मिट्टी (और)। मक्कडासंताणा--मकडी के जाले को। संकमणे--कुचला हो। मे--मैंने। एगिंदिया--एक इन्द्रियवाले। बेइंदिया--दो इन्द्रियवाले। तेइंदिया--तीन इन्द्रिय वाले। चउरिंदिया--चार इन्द्रियवाले। पंचिंदिया--पाँच इन्द्रियवाले। जे--जो। जीवा--जीव हैं (उन्हें)। विराहिया--पीड़ित किया हो। अभिहया--सम्मुख आते हुए को मारा हो। वत्तिया--धूल आदि से ढांका हो। लेसिया--मसला हो। संघाइया--इकट्ठा किया हो। संघट्टिया--छुआ हो। परियाविया--परिताप (कष्ट) पहुँचाया हो। किलामिया--मृततुल्य कर दिया हो। उद्दविया--हैरान किया हो-भयभीत किया हो। ठाणाओ-एक जगहसे। ठाणं-दूसरी जगह। संकामिया-रक्खा हो। जीवियाओ-जीवन से। ववरोविया-छुड़ाया हो। तस्स-उसका। दुक्कडं-पाप। मि-मेरे लिए। मिच्छा-मिथ्या (निष्फल) हो।

तस्स उत्तरी का पाठ।

तस्स उत्तरीकरणेणं पायच्छित्तकरणेणं, विसोही-करणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं,कम्माणं, निग्घायणट्ठाए ठामि काउसग्गं, अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं-उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं, अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं, दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं, आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, णमोक्कारेणं, न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥ १ ॥

शब्दार्थ—

तस्स-उसको (आत्मा को) उत्तरीकरणेणं-उत्कृष्ट बनाने के लिये। पायच्छित्तकरणेणं-प्रायश्चित्त करने के लिये। विसोहीकरणेणं-विशेष शुद्धि करने के लिए। विसल्लीकरणेणं-शल्य का त्याग करने के लिए। पावाणं-पाप रूप अशुभ। कम्माणं-कर्मों का। निग्घायणट्ठाए-नाश करने के लिए। काउस्सग्गं-कायोत्सर्ग। ठामि-करता हूँ। अन्नत्थ-नीचे लिखे हुए आगारों के सिवाय। ऊससिएणं-उच्छ्वास (ऊँचा श्वास) लेने से। नीससिएणं-निःश्वास (नीचा श्वास) लेने से। खासिएणं-खासी आने से। छीएणं-छींक आने से। जंभाइएणं-उबासी आने से। उड्डुएणं-डकार आने से। वायनिसग्गेणं-अधोवायु निकलने से। भमलीए-चक्कर आने से। पित्तमुच्छाए-पित्त विकार की मूर्च्छा से। सुहुमेहिं-सूक्ष्म (थोडा)। अंगसंचालेहिं-अंग (संचार) हिलने से। सुहुमेहिं-थोडा-सा। खेलसंचालेहिं-कफ संचारसे। सुहुमेहिं-थोडीसी। दिट्ठिसंचालेहिं-दृष्टि चलनेसे (तथा)। *एवमाइएहिं-इस प्रकारके दूसरे। आगारेहिं-

---

? नोट:—*आदि शब्द से नीचे लिखे हुए चार आगार और समझने चाहिए (१) आग के उपद्रव से दूसरी जगह जाना, (२) बिल्ली चूहे आदि का उपद्रव या किसी पंचेन्द्रिय जीव के छेदन-भेदन होने के कारण अन्य स्थान में जाना (३) यकायक डकैती पड़ने या राजा आदि के सताने से स्थान बदलना (४) शेर आदि के भयसे, सांप आदि विषैले जन्तु के डंक से या दीवार आदि गिर पड़ने की शंका से दूसरे स्थान को जाना।

कायोत्सर्ग करने के समय ये आगार इसलिये रक्खे जाते हैं कि सब की शक्ति एकसी नहीं होती। जो कम ताकत वाले या भयालु स्वभाव के हैं वे ऐसे मौके पर घबरा जाते हैं, इसलिए उन अधिकारियों के निमित्त ऐसे आगारों का रक्खा जाना आवश्यक है। आगार रखने में अधिकारी भेद ही मुख्य कारण हैं।

आगारों से। मे-मेरा काउस्सग्गो-कायोत्सर्ग। अभग्गो-अभंग (भांगे नहीं)। अविराहिओ-अखंडित। हुज्ज हो। जाव-जव तक। अरिहंताणं-अरिहंत। भगवंताणं-भगवान् को। णमोक्कारेणं-नमस्कार करके। न पारेमि-पारूं। ताव-तब तक। कायं-काया को। ठाणेणं-स्थिर करके। मोणेणं-मौन रहकर। झाणेणं-ध्यान धरकर-एकाग्र मन से। अप्पाणं-आतमा को (कषाय आदि से) वोसिरामि-अलग करता हूँ।

लोगस्स चउव्वीसत्थव का पाठ।

(अनुष्टुपवृत्तम्)

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्मतित्थयरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ॥ १ ॥

(आर्यावृत्तम्)

उसभमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ २ ॥
सुविहिं च पुप्फदंतं, सीयलसिज्जंस वासुपुज्जं च
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥३॥
कुन्थुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥४॥
एवं मए अभित्थुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा।
चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥५॥
कित्तियवंदियमहिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरुग्गवोहिलाभं, समाहिवर-मुत्तमं दिंतु ॥६॥
चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥७॥

शब्दार्थ—

लोगस्स-लोकमें। उज्जोयगरे–उद्योत (प्रकाश) करने वाले। धम्मतित्थयरे–धर्मरूप तीर्थको स्थापित करने वाले। जिणे–राग द्वेष को जीतने वाले। अरिहन्ते–कर्मरूप शत्रु का नाश करने वाले। चउवीसंपि–चौवीसों। केवली-केवलज्ञानी तीर्थंकरों की। कित्तइस्सं-मैं स्तुति करता हूं। उसभं-श्री ऋषभदेव स्वामी को। च-और। अजियं- श्री अजितनाथ जी को वन्दे-वन्दना करता हूं। श्री संभवं–संभवनाथ स्वामी को अभिणंदणं च – और श्री अभिनंदन स्वामी को। सुमइं-श्री सुमतिनाथ प्रभु को। च-और। पउमप्पहं-श्री पद्मप्रभु स्वामी को। सुपासं-श्री सुपार्श्वनाथ प्रभुको। जिणं च चंदप्पहं-और श्री जिनेश्वर चंद्रप्रभु को। वंदे-वन्दना करता हूँ। सुविहिं-श्री सुविधिनाथ जी को। च--और। पुप्फदंतं–श्री सुविधिनाथ जी का दूसरा नाम श्री पुष्पदंत भगवान् को। सीयल--श्री शीतलनाथ जी को। सिज्जंस--श्री श्रेयांसनाथजी को। वासुपुज्जं–श्री वासुपूज्य स्वामी को। च–और। विमल–श्री विमलनाथ जी को। अणंतं च जिणं–श्री अनन्तनाथजी को। धम्मं--श्री धर्मनाथजी को। च--और। संतिं--श्री शान्तिनाथजी को। वंदामि--वन्दना करता हूँ। कुंथुं--श्री कुंथुनाथजी को। अरं-श्री अरनाथजी को। मल्लि--श्री मल्लिनाथजी को। वंदे--वन्दन करता हूँ। मुणिसुव्वयं--श्री मुनिसुव्रतजी को। च–और। नमिजिणं-श्री नमिनाथ जिनेश्वर को। रिट्ठनेमिं--श्री अरिष्टनेमि (श्री नेमिनाथजी) को। पासं--श्रीपार्श्वनाथजी को। तह-तथा। वद्धमाणं-श्री वर्द्धमान (महावीर स्वामी) को। वंदामि–मैं वन्दना करता हूँ। एवं--इस प्रकार। मए-मेरे द्वारा। अभित्थुआ–स्तुति करते हुए। विहुयरय-

मला--पापरज के मल से विहीन । पहीणजर-मरणा--बुढापे तथा मरण से युक्त । चउवीसंपि--चोवीसों । जिणवरा-जिनेश्वर देव । तित्थयरा--तीर्थंकर देव । मे--मुझ पर । पसीयंतु--प्रसन्न हों । कित्तिय-वचन योग से कीर्तन किये हुए । वंदिय--काया योग से पूजन किये हुए । महिया--मनोयोग से पूजन किये हुए । जे--जो । लोगस्स-लोक में । उत्तमा--उत्तम (प्रधान) । सिद्धा--सिद्ध भगवन्त (है) । ए--वे । आरुग्गबोहिलाभं--आरोग्य को तथा धर्म के लाभ को । समाहिवरमुत्तमं--और उत्तम समाधि के वर को । दिंतु--देवें । चंदेसु--चन्द्रों से भी । निम्मलयरा--विशेष निर्मल । आइच्चेसु-सूर्यों से भी । अहियं--अधिक । पयासयरा--प्रकाश करने वाले । सागरवरगंभीरा--महा समुद्र के समान गंभीर । सिद्धा--सिद्ध भ० । मम--मुझको । सिद्धि--सिद्धि । दिसंतु--देवें ।

करेमि भंते का पाठ

करेमि भंते ! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव-नियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं-न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा तस्स भन्ते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥

शब्दार्थ--

भंते--हे भगवन् ! सामाइयं--सामायिक व्रत को । करेमि--मैं ग्रहण करता हूँ । सावज्जं--सावद्य (पापसहित) । जोगं--व्यापार का । पच्चक्खामि--प्रत्याख्यान (त्याग) करता हूँ । जाव--जब तक । नियमं--इस नियम का । पज्जुवासामि--सेवन करता रहूँ तब तक । दुविहं--दो प्रकार के कारण से । तिविहेणं--३ प्रकार के योग से । न करेमि--सावद्य योग को न करूंगा । न कारवेमि-

न दूसरेसे कराऊँगा। मणसा वयसा कायसा—मन 'वचन और कायासे। तस्स-उससे, प्रथम के पाप से। भंते—हे भगवन् ! पडिक्कमामि-में निवृत्त होता हूँ। निंदामि-उस पापकी आत्मसाक्षी से निन्दा करता हूँ। गरिहामि-विशेष गर्हा, निन्दा करता हूँ। अप्पाणं-आत्माको (उस पापव्यापार से)। वोसिरामि-हटाता हूं, अलग करता हूँ।

नमोत्थुणं का पाठ।

नमोत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं, आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं पुरिसवरपुण्डरीयाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं, अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं दीवोत्ताणं सरणगइट्ठाणं अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं विअट्टछउमाणं जिणाणं, जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं, बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोयगाणं, सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्ति-सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जियभयाणं।
(दूसरे में) ठाणं संपाविउकामाणं णमो जिणाणं जियभयाणं
(तीसरे में) णमोत्थु णं मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसयस्स अणेगगुणसंजुत्तस्स जाव संपाविउकामस्स।

शब्दार्थ —

अरिहंताणं भगवंताणं-अरिहंत भगवान् को। नमोत्थुणं-नमस्कार हो। आइगराणं-धर्म की आदि करने वाले। तित्थयराणं-धर्म तीर्थ की स्थापना करने वाले। सयंसंबुद्धाणं-अपने आप ही

बोध पाये हुए। पुरिसुत्तमाणं-पुरुषों में श्रेष्ठ। पुरिससीहाणं-पुरुषों में सिंह के समान। पुरिसवरपुंडरीयाणं-पुरुषों में श्रेष्ठ कमल के समान। पुरिसवरगंधहत्थीणं-पुरुषों में प्रधान गंध हस्ति के समान। लोगुत्तमाणं-लोक में उत्तम। लोगनाहाणं-लोक के नाथ। लोगहियाणं-लोक का हित करने वाले। लोगपईवाणं-लोक के लिये दीपक के समान। लोगपज्जोयगराणं-लोक में उद्योत करने वाले अभयदयाणं-अभय देने वाले। चक्खुदयाणं-ज्ञान रूपी नेत्र देने वाले। मग्गदयाणं-धर्म मार्ग के दाता। सरणदयाणं-शरण देने वाले। जीवदयाणं-संयम या ज्ञानरूपी जीवन देने वाले। बोहिदयाणं-बोधि अर्थात् सम्यक्त्व देने वाले। धम्मदयाणं-धर्म के दाता। धम्मदेसयाणं-धर्म के उपदेशक। धम्मनायगाणं-धर्म के नायक। धम्मसारहीणं-धर्म के सारथी। धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं-धर्म के प्रधान तथा चार गति का अन्त करने वाले, अतएव चक्रवर्ती के समान। दीवो त्ताणं-संसार रूप समुद्र में द्वीपसमान त्राण। सरणगइपइट्ठाणं-शरण गये हुए को आधारभूत। अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं—अप्रतिहत तथा श्रेष्ठ ज्ञान दर्शन को धारण करनेवाले। विअट्टछउमाणं—छद्म अर्थात् घाति कर्म-रहित। जिणाणं जावयाणं—स्वयं (राग द्वेष को) जीतने वाले, औरों को जिताने वाले। तिन्नाणं तारयाणं—स्वयं (संसार से) तरे हुए तथा दूसरों को तारने वाले। बुद्धाणं बोहयाणं—स्वयं बोध पाये हुए तथा दूसरों को बोध प्राप्त कराने वाले। मुत्ताणं मोयगाणं—स्वयं (कर्म बंधन से) छुटे हुए, दूसरों को छुडाने वाले। सव्वन्नूणं—सर्वज्ञ। सव्वदरिसीणं—सर्वदर्शी। सिवं—निरुपद्रव। अयलं—स्थिर। अरुयं-रोग-रहित। अणंतं-अन्तरहित। अक्खयं-क्षयरहित। अव्वाबाहं-बाधा (पीड़ा) रहित। अपुणरावित्ति-पुनरागमन

रहित । सिद्धिगइनामधेयं-सिद्ध गति नाम के । ठाणं-स्थान को संपत्ताणं-प्राप्त हुए । जिअभयाणं-भय को जीतने वाले । जिणाणं-जिनेश्वर सिद्ध भगवान् को । नमो-नमस्कार हो । (दूसरे में)- ठाणं संपाविउकामाणं—सिद्धगति के स्थान को पाने की इच्छा करने वाले अरिहंत भगवान् को। (तीसरे में) मम--मेरे । धम्मोवदेसयस्स—धर्म का उपदेश देने वाले । धम्मायरियस्स—धर्माचार्य को (जो कि) । अणेगगुणसंजुत्तस्स—अनेक गुणों से युक्त हैं । जाव-यहां तक कि । संपाविउकामस्स--सिद्धिगति के स्थान को पाने की इच्छा वाले हैं ।

सामायिक पारने का पाठ ।

एयस्स नवमस्स सामाइयवयस्स पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं, मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे, कायदुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइ अकरणयाए सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणयाए, तस्स मिच्छा मि दुक्कड । सामाइयं सम्मं काएण न फासियं, न पालियं, न सोहियं न तीरियं, न किट्टियं, न आराहियं आणाए अणुपालियं न भवइ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

पडिक्कमामि आहारसन्ना, भयसन्ना, मेहुणसन्ना, परिग्गहसन्ना एयां चउसन्ना कया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

पडिक्कमामि चउण्हं विकहा * इत्थीकहा, भत्त-कहा, देस-कहा, रायकहा चउ विकहा कया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

अइक्कमे, वइक्कमे, अइयारे, अणायारे जो मे दिवसम्मि अइयारो कओ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

नोटः—* श्राविकाएँ स्त्री कथा के स्थान पर 'पुरिस' कहा ऐसा बोलें ।

सामाइए मणसो दस दोसा, वयणस्स दस दोसा सरीरस्स दुवालस दोसा कया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

शब्दार्थ

एयस्स–ऐसे । नवमस्स–नववें । सामाइयवयस्स–सामायिक व्रत के । पंच–पांच । अइयारा–अतिचार । जाणियव्वा–जानना न–नहीं । समायरियव्वा–आदरना । तं जहा (तद्यथा) वह इस तरह है । ते–उनकी । आलोउं–आलोचना करता हूँ । मणदुप्पणि-हाणे–मन खोटे मार्ग में प्रवृत्त हुआ हो । वयदुप्पणिहाणे–वचन खोटे मार्ग में प्रवृत्त हुआ हो । कायदुप्पणिहाणं-काया खोटे मार्ग में प्रवृत्त हुई हो । सामाइयस्स सइ अकरणयाए–सामायिक लेकर अधूरी पारी हो या सामायिक की स्मृति (ख्याल) न रक्खी हो । सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणयाए–सामायिक अव्यवस्थितपन से याने चंचलपन से की हो । तस्स–उस सम्बन्धी । मि–मेरा । दुक्कडं–पाप । मिच्छा–मिथ्या (निष्फल) हो । सामाइयं सम्मं काएणं–सामायिक सम्यक् प्रकार शरीर से । न फासियं–स्पर्श नहीं की । न पालियं–नहीं पाली । न सोहियं -शुद्ध नहीं की । न तीरियं-समाप्त नहीं की । न किट्टियं-कीर्त्तन नहीं की । न आराहियं–नहीं आराधी । आणाए–वीतराग की आज्ञानुसार । अणुपालियं–पाली न भवइ- न हो । तस्स -उसका । दुक्कडं-पाप । मि-मेरे लिए । मिच्छा- मिथ्या (निष्फल) हो।

पडिक्कमामि-निवृत्त होता हूँ । आहारसन्ना–आहारसंज्ञा । भयसन्ना–भयसंज्ञा । मेहुणसन्ना–मैथुनसंज्ञा । परिग्गहसन्ना-परिग्रह संज्ञा । एया–इन । चउसन्ना–चार संज्ञाओं में से कोई संज्ञा । कया–की हो । तस्स–उस सम्बन्धी । मि–मेरा । दुक्कडं–पाप ।

मिच्छा–मिथ्या (निष्फल) हो। पडिक्कमामि–निवृत्त होता हूँ। चउण्हं–विकहा-चार विकथाओं से। इत्थी–कहा–स्त्री कथा। भत्तकहा-भक्त (आहार की) कथा। देशकहा–देश कथा। रायकहा-राजकथा। चउविकहा-चार विकथाओं में से कोई विकथा कया-की हो। तस्स-उस सम्बन्धी। मि-मेरा। दुक्कडं-पाप। मिच्छा-मिथ्या हो। अइक्कमे-अतिक्रम। वइक्कमे-व्यतिक्रम। अइयारे-अतिचार। अणायारे-अनाचार। जो-जो। मे-मैंने। दिवसम्मि-दिन (रात्रि) में। अइयारो-अतिचार। कओ–किया हो। सामाइए-सामायिक में। मणसो-मन के। दस-दस। दोसा-दोष। वयणस्स-वचन के। दस-दस। दोसा-दोष। सरीरस्स-काया के। दुवालस्स-बारह-दोसा-दोष। कया-सेवन किये हों। तस्स-उस सम्बन्धी। मि-मेरा। दुक्कडं-पाप। मिच्छा-मिथ्या (निष्फल) हो।

सामायिक के बत्तीस दोष।

(ग्रन्थानुसार यहां लिखते हैं)

मन के दश दोष

अविवेक-जसो-कित्ती,-लाभत्थी-गव्व-भय-नियाणत्थी।
संसयरोसअविणउ, अबहुमाण ए दोसा भणियव्वा॥

१–विवेक विना सामायिक करे तो अविवेक दोष।

२–यशकीर्त्ति के लिये सामायिक करे तो यशोवांछा दोष।

३-धनादि के लाभ की इच्छा से करे तो लाभवांछा दोष।

४–घमण्ड (अहंकार) सहित करे तो गर्व दोष।

५–राजादिक के अपराध के भय से करे तो भयदोष।

६–सामायिक में नियाणो (निदान) करे तो निदान दोष

७–फल में सन्देह रखकर सामायिक करे तो संशय दोष।

८–सामायिक में क्रोध, मान, माया, लोभ करे तो रोष-दोष।

९–विनयपूर्वक सामायिक न करे, तथा सामायिक में देव, गुरु, धर्म की अविनय आशातना करे तो अविनय दोष।

१०–बहुमान तथा भक्तिभावनापूर्वक सामायिक न करके बेगारी की तरह सामायिक करे तो अबहुमान दोष।

वचन के दश दोष।

कुवयणसहसाकारे, सछंदसंखेवकलहं च।
विगहा वि हासोऽसुद्धं, निरवेक्खो मुणमुणा दोसा दस।

१–कुवचन कुत्सित वचन बोले तो कुवचन दोष।

२–विना विचारे बोले तो सहसाकार दोष।

३–सामायिक में गीत, ख्यालादि राग उत्पन्न करनेवाले संसार सम्बन्धी गाने गावे तो स्वच्छंद दोष।

४–सामायिक के पाठ और वाक्य को संक्षिप्त करके बोले तो संक्षेप दोष।

५–सामायिक में क्लेश का वचन बोले तो कलह दोष।

६–राजकथा, देशकथा, स्त्रीकथा, भोजनकथा इन चार कथाओं में से कोई कथा करे तो विकथा दोष।

७-सामायिक में हंसी मसखरी, ठट्टा रोल करे तो हास्य दोष।

८-सामायिक में गड़बड़ करके उतावला २ बोले, विना उपयोग और अशुद्ध पढे बोले तो अशुद्ध दोष।

९ सामायिक में उपयोग विना बोले तो निरपेक्षा दोष।

१० स्पष्ट उच्चारण न करके गुण २ बोले तो मुम्मण दोष।

काय के बारह दोष।

कुआसणं चलासणं चलदिट्ठी
सावज्जकिरिया-लंवणाकुञ्चणपसारणं।
आलस्स मोडण मल विमासणं,
निद्दा वेयावच्चति बारस कायदोसा॥ १॥

१-सामायिक में अयोग्य आसन से बैठे जैसे कि ठासणी मारके बैठे, पांव रखकर बैठे, पग पसार कर बैठे, ऊँचा आसन पलाठी मारकर बैठे, इत्यादि अभिमान के आसन से बैठे तो कुआसन दोष।

२-सामायिक में स्थिर आसन न राखे, (एक और एक ही जगह आसन न राखे, आसन बदले, चपलाई करे) तो चलासन दोष।

३-सामायिक में दृष्टि को स्थिर न करे, इधर उधर दृष्टि फेरे तो चलदृष्टि दोष।

---

0 नोट- कोई २ ऐसा भी बोलते हैं कि सामायिक में अव्रती को सत्कार सम्मान देवे, (आओ) पधारो कहे तथा अव्रती को जाने आने को कहे।

४-सामायिक में शरीर से कुछ सावद्य क्रिया करे, घर की रखवाली करे, शरीर से इशारा करे तो सावद्य क्रिया दोष।

५-सामायिक में भीतादिक का टेका (आधार) लेवे तो आलंबन दोष।

६-सामायिक में विना प्रयोजन के हाथ-पग को संकोचे पसारे तो आकुंचन-प्रसारण दोष।

७-सामायिक में अंग मोडे तो आलस्य दोष।

८-सामायिक में हाथ-पैर का कड़का काढे तो मोटन दोष।

९-सामायिक में मैल उतारे तो मल दोष।

१०-गले में तथा गाल (कपोल) में हाथ लगाकर शोकासन से वैठें तो विमासण दोष।

११ सामायिक में निद्रा लेवे तो निद्रा दोष।

१२ सामायिक में विना कारण दूसरे के पास वैयावच्च करावे तो वैयावृत्य दोष।

नोट-* सामायिक में बिना पूंज्या खाज खणे, या विना पूज्या हाले-चाले तो बिमासण दोष।

卐

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

आवश्यक सूत्र सार्थ

श्रावक-प्रतिक्रमण

अथ इच्छामि णं भंते का पाठ।

इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे देवसियं पडिक्कमणं, ठाएमि, देवसियणाणदंसणचरित्ताचरित्ततवअइयार-चितणत्थं करेमि काउस्सग्गं ॥

शब्दार्थ

इच्छामि—मैं इच्छा करता हूँ। णं-यह अव्यय, वाक्य-अलंकार में आता है। भंते-हे पूज्य ! हे भगवन् ! तुब्भेहिं-तुम्हारी। अब्भणुण्णाएसमाणे-आज्ञानुसार। देवसियं पडिक्कमणं-दिन संबन्धी प्रतिक्रमण को। ठाएमि-करता हूँ। देवसिय-दिवस सम्बन्धी। नाण-दंसण-ज्ञान, दर्शन (श्रद्धान) चरित्ताचरित्त—देशव्रत (श्रावक का चारित्र)। तव—तप। अइयार—अतिचार (दोष) के। चिन्तणत्थं—चिन्तन करने के लिए। करेमि—करता हूँ। काउस्सग्गं-कायोत्सर्ग को।

अथ इच्छामि ठामि का पाठ।

इच्छामि * ठामि काउस्सग्गं जो मे देवसिओ अइयारो कओ, काइओ, वाइओ माणसिओ, उस्सुत्तो, उम्मग्गो, अकप्पो, अकर—

---

* आवश्यक आगमो॰ पृष्ट में 'ठाइउं' (करने के लिये) है किंतु 'ठामि' पाठान्तर प्रचलित है। इसलिए यहां रखा गया है।

णिज्जो, दुज्झाओ, दुव्विचिंतिओ, अणायारो, अणिच्छिअव्वो, असावगपाउग्गो, नाणे तह दंसणे, चरित्ताचरित्ते सुए, सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं, पंचण्हमणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्वयाणं, चउण्हं सिक्खावयाणं, बारसविहस्स सावगधम्मस्स, जं खंडियं, जं विराहियं तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ॥२॥

शब्दार्थ—

इच्छामि—मैं इच्छा करता हूँ। ठामि-करता हूँ। काउस्सग्गं-एक स्थान में स्थिर रहने रूप कायोत्सर्ग को। जो मे-जो मैंने। देवसिओ-दिन सम्बन्धी। अइयारो कओ-अतिचार (दोष) किया हो। काओ-काय सम्बन्धी। वाइओ-वचन सम्बन्धी। माणसिओ-मन सम्बन्धी। उस्सुत्तो-सूत्र विपरीत कथन किया हो। उम्मग्गो-उन्मार्ग (जैन मार्ग से विपरीत कथन किया हो।) अकप्पो-अकल्पनीय (नहीं कल्पने योग्य।) अकरणिज्जो-नहीं करने योग्य। दुज्झाओ-दुष्ट ध्यान किया हो। दुव्विचिन्तिओ-दुष्ट चिन्तन किया हो। अणायारो-अनाचार, सर्वथा नियमों का भंग किया हो। अणिच्छिअव्वो-नहीं इच्छा करने योग्य पदार्थ की इच्छा की हो। असावगपाउग्गो-श्रावक वृत्ति से विरुद्ध काम किया हो। नाणे-ज्ञान में। तह-तथा। दंसणे-दर्शनमें। चरित्ताचरित्ते-देशव्रत में-सुए-सूत्र सिद्धान्तमें। सामाइए-समताभाव रूप सामायिक में। तिण्ह गुत्तीणं-तीन गुप्ति (मन वचन, काय को वश में रखना) की। चउण्हं कसायाणं-चारकषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ) की। पंचण्ह अणुव्वयाणं पाँच अणुव्रत (स्थूल हिंसा का त्याग। स्थूल मृषावाद-असत्य का त्याग, स्थूल अदत्तादान-चोरी का त्याग, स्थूल मैथुन सेवन का त्याग, स्थूल परिग्रह का त्याग) की। तिण्हं गुणव्वयाणं-तीन गुण व्रत (दिग्व्रत, उपभोग परिभोग परिमाणव्रत, अनर्थ दंड

त्याग, व्रत) की। चउण्हं सिक्खावयाणं-चार शिक्षाव्रत (सामायिक व्रत, देशावकाशिक व्रत, पोषधोपवास व्रत, अतिथि संविभाग व्रत) की। बारसविहस्स-इस तरह बारह प्रकार के। सावगधम्मस्स-श्रावक धर्म की। जं खंडिय-जो देश से खंडना की हो। जं विराहियं-जो सर्वथा विराधना की हो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं-मेरे वे सब पाप निष्फल हों।

ज्ञान के अतिचार का पाठ।

आगमे तिविहे पण्णत्ते, तं जहा—सुत्तागमे अत्थागमे तदुभयागमे, इस तरह तीन प्रकार आगमरूप ज्ञान के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-जं वाइद्धं, वच्चामेलियं, हीणक्खरं, अच्चक्खरं, पयहीणं, विणयहीणं, जोगहीणं, घोसहीणं, सुट्ठुदिण्णं, दुट्ठुपडिच्छियं अकाले कओ सज्झाओ, काले न कओ सज्झाओ, असज्झाए सज्झाइयं, सज्झाए न सज्झाइयं भणतां गुणतां विचारतां ज्ञान और ज्ञानवंत की आशातना की हो।

शब्दार्थ

आगमे--आगम। तिविहे--तीन प्रकार का। पण्णत्ते--कहा है। तं जहा--जैसे कि। सुत्तागमे--सूत्रा-गम शब्द रूप आगम। अत्थागमे--अर्थ रूप आगम। तदुभयागमे--शब्द और अर्थ इन दोनों रूप आगम। जं--जो। वाइद्धं--सूत्र उलट पलट पढा हो। वच्चामेलियं--अन्य सूत्रों का पाठ अन्य सूत्रों के साथ मिलाया हो। हीणक्खरं--हीण अक्षरयुक्त पठन किया हो। अच्चक्खरं--अधिक अक्षरयुक्त पठन किया हो। पयहीणं--पदहीन पढा हो। विणयहीणं विनय रहित पठन किया हो। जोगहीणं--योगहीन पढा हो। घोसहीणं--उदात्त आदि स्वर रहित पढा हो। सुट्ठुदिण्णं दुट्ठुप-

डिच्छियं-अच्छा ज्ञान अविनीत को दिया हो। दुष्टभाव से ज्ञान ग्रहण किया हो। अकाले कओ सज्झाए-जिस सूत्र का जो काल शास्त्र में स्वाध्याय के लिये कहा है, उससे दूसरे काल में स्वाध्याय किया हो। काले न कओ सज्झाओ-काल में स्वाध्याय न किया हो। असज्झाए सज्झाइयं-अस्वाध्याय में स्वाध्याय किया हो। सज्झाए न सज्झाइयं-स्वाध्यायकाल में स्वाध्याय न किया हो।

दर्शनसम्यक्त्व का पाठ।

अरिहन्तो मह देवो जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं ॥१॥
परमत्थसंथवो वा, सुदिट्ठपरमत्थसेवणा वावि।
वावण्णकुदंसणवज्जणा य, सम्मत्तसद्दहणा ॥२॥

इअ सम्मत्तस्स पंच अइआरा पेयाला जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं-"संका, कंखा, वितिगिच्छा परपासंडपसंसा, परपासंडसंथवो" इस प्रकार श्री समकितरत्न पदार्थ के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं। १ श्रीजिनवचन सच्चा कर श्रद्धा न हो. प्रतीत्या न हो, रुच्या न हो २ परदर्शन की आकांक्षा की हो ३. परपाखंडी का परिचय किया हो ४. धर्म फल प्रति संदेह किया हो. मेरे सम्यक्त्वरूपरत्न पर मिथ्यात्वरूपी रज मैल लगा हो।

शब्दार्थ

अरिहन्तो-अरिहन्त भगवान्। मह-मेरे। देवो-देव (हैं)। जावज्जीवं-जीवन पर्यन्त। सुसाहुणो-उत्तम (निर्ग्रन्थ) साधु। गुरुणो-गुरु (हैं)। जिणपण्णत्तं-जिनेन्द्र कथित। तत्तं-तत्त्व (धर्म) इअ-इस प्रकार। सम्मत्तं-सम्यक्त्व। मए-मैंने। गहियं-ग्रहण

किया है। परमत्थसंथवो वा–जीवादि नव पदार्थों का सम्यग्ज्ञान। सुदिट्ठपरमत्थसेवणा वावि–जिन्होंने भले प्रकार जीवादि तत्त्वों को जान लिया है, उनकी सेवा करने तथा। वावण्णकुदंसण वज्जणा य-मिथ्यादृष्टि जीवों की संगति का त्याग करने रूप। सम्मत्तसद्दहणा-सम्यक्त्व की श्रद्धा (मेरे) हो। इअ–इस प्रकार। सम्मत्तस्स–सम्यक्त्व के। पंच-पांच। अइयारा-अतिचार। पेयाला-प्रधान। जाणियव्वा-जानना चाहिए। न समायरियव्वा-आचरण नहीं करना चाहिए। तंजहा-वे अतिचार निम्न प्रकार हैं। ते आलोउं-उनकी आलोचना करता हूँ। संका-वीतराग के वचन में शंका की हो। कंखा-जो मार्ग वीतराग कथित नहीं है, उसकी चाहना की हो। वितिगिच्छा-त्यागी महात्माओं के वस्त्र, पात्र शरीर आदि उनकी त्यागवृत्ति के कारण मलिन हों, उन्हें देखकर घृणा की हो, या धर्म के फल में सन्देह किया हो। परपासंडपसंसा-मिथ्यादृष्टि की प्रभावना देखकर प्रशंसा की हो। परपासंडसंथवो-मिथ्यादृष्टि का परिचय किया हो।

बारह स्थूल अतिचार।

पहला स्थूल–प्राणातिपात-विरमणव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-१, रोष वश से गाढा बंधन बांधा हो २, गाढा घाव घाला हो ३, अवयव का छेद (चाम आदि का छेद) किया हो अधिक भार भरा हो ४, भात पाणी का विच्छेद किया हो, ।

दूजा स्थूल-मृषावाद विरमणव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं १, सहसाकार से किसी के प्रति कुडा आल (झूठा दोष) दिया हो २, रहस्य (गुप्त) बात प्रगट की हो ३, स्त्री

पुरुष का मर्म प्रकाशित किया हो, ४, मृषा (झूठा) उपदेश किया हो ५, कुडा लेख लिखा हो ।

तीजा स्थूल--अदत्तादान विरमणव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं १, चोर की चुराई हुई वस्तु ली हो २, चोर को सहायता दी हो ३, राज विरुद्ध काम किया हो ४, कुडा तौल कुडा माप किया हो ५, वस्तु में भेल संभेल की हो ।

चौथा स्थूल-[1]स्वदारसंतोप परदारविवर्जनरूप मैथुनविरमणव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं १, [2]इत्तरियपरिग्गहिया से गमन किया हो २, [3]अपरिग्गहिया से गमन किया हो ३, अनंगक्रीडा की हो ४, पराये का विवाह सम्बन्ध कराया हो ५, काम भोग की तीव्र अभिलाषा की हो ।

पांचवां स्थूल-परिग्रह परिमाणव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं १, खेत्त वत्थु का परिमाण अतिक्रमण (उल्लंघन) किया हो २, हिरण्य सुवर्ण का परिमाण अतिक्रमण किया हो ३, धन धान्य का परिमाण अतिक्रमण किया हो ४, द्विपद चौपद का परिमाण अतिक्रमण किया हो ५, कुविय सोना चांदी के सिवाय और धातु का परिमाण अतिक्रमण किया हो ।

---

१. स्वदारसंतोप परदारविवर्जनरूप, ऐसा पुरुष को बोलना चाहिये और स्त्री को स्वपतिसंतोष परपुरुषविवर्जनरूप ऐसा बोलना चाहिये ।

२. इत्वरिका परिगृहिता-इत्तरियपरिग्गहीता (छोटी उम्र वाली विवाहिता स्वस्त्री, उपासकदशा अ०प० १)

३. अपरिगृहिता-अपरिग्गहीया (अविवाहिता स्त्री) उपासकदशा०

छट्ठे दिशिव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं १, उड्ढ (ऊँची) दिशा का परिमाण अतिक्रमण किया हो २, अघो (नीची) दिशा का परिमाण अतिक्रमण किया हो ३, तिरछी दिशा का परिमाण अतिक्रमण किया हो ४, क्षेत्र बढाया हो ५, क्षेत्र-परिमाण के भूल जाने से पंथ का सन्देह पडने पर आगे चला हो।

सातवां उपभोगपरिभोग-परिमाणव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं १, पच्चक्खाण उपरान्त सचित्त का आहार किया हो। २, सचित्त पडिबद्ध का आहार किया हो। ३, अपक्क(अपक्व) का आहार किया हो। दुपक्क (दुष्पक्व) का आहार किया हो ४. तुच्छोपधि का आहार किया हो।

पन्द्रह कर्मादान के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो १. आलोउं-इंगाल कम्मे, २. वणकम्मे, ३. साडीकम्मे, ४. भाडी-कम्मे, ५. फोडीकम्मे, ६. दन्तवाणिज्जे, ७. लक्खवाणिज्जे, ८. रस-वाणिज्जे, ९. केसवाणिज्जे, १०. विसवाणिज्जे, ११. जंतपीलण-कम्मे, १२. निल्लंछणकम्मे, १३. दवग्गिदावणया, १४. सर-दह-तलाय-सोसणया, १५. असईजणपोसणया।

अध्य० १,) के साथ गमन (मैथुन) किया हो, ऐसा पुरुष को बोलना चाहिये। तथा स्त्री को इत्वरपरिगृहीत-इत्तरपरिग्गहिय (छोटी उम्र वाले विवाहित पति) और अपरिगृहीत-अपरिग्गहिय (अविवाहित पुरुष) से गमन मैथुन) किया हो ऐसा बोलना चाहिये।

शब्दार्थ

इंगालकम्मे--कोयले बनाना, ईंट, चूना आदि पकाना, भड़-भूज आदि के काम-धंधे। वणकम्मे--वन (जंगल) खरीदकर वृक्षों को कटवा कर बेचना। साडीकम्मे--गाडी, इक्का, बग्घी, आदि वाहनों को बनाने और बेचने का धन्धा करना। भाडीकम्मे--ऊँट, घोडे, बैलगाडी आदि वाहनों को किराये पर देकर आजीविका चलाना। फोडीकम्मे--भूमि (खान आदि) फोडने का काम करना। दंतवाणिज्जे--हाथी के दांत, शंख आदि का व्यापार करना। लक्ख-वाणिज्जे--लाख का व्यापार करना। रसवाणिज्जे--मदिरा आदि बनाने तथा बेचने का काम करना। केसवाणिज्जे--दासी, दास को लेकर दूसरी जगह बेचकर आजीविका करना तथा केश वाले जीवों का व्यापार करना। विसवाणिज्जे--संखिया आदि विषैले पदार्थों का व्यापार करना। जंतपीलणकम्मे--तिल, ईख आदि पीलने, यन्त्र कल (कोल्हू, घाणी आदि) चलाने का धन्धा करना। निल्लंछण-कम्मे--बैल तथा घोडे को नपुंसक बनाने का, ऊँट, बैल आदि के नाक छेदने का तथा भेंड बकरी आदि के कान चीरने का काम करना। दवग्गिदावणया--जंगल आदि में आग लगाना। सरदहतलायसोस-णया--झील, कुण्ड तालाब आदि को सुखाना। असईजणपोसणया--आजीविका निमित्त दुश्चरित्र स्त्रियों का पोषण करना, तथा कुत्ता, बिल्ली, नेवला आदि हिंसक प्राणियों को पालना।

आठवें अनर्थदंड-विरमणव्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं--कामविकार पैदा करने की कथा की हो। १, भंड--कुचेष्टा की हो २, मुखरीवचन बोला हो ३, ‡ अधिकरण

---

‡ अधिकरण--आरम्भ का साधन--हथियार--ओजार।

जोड़ रखा हो ४, उपभोग-परिभोग अधिक बढ़ाया हो ५।

नववें सामायिक व्रत--के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-मन,वचन और काया के अशुभयोग प्रवर्त्ताये हों १-३, सामायिक की स्मृति न की हो ४, समय पूर्ण हुए विना सामायिक पारी हो ५।

दसवें देसावगासिक व्रत—के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-१ नियमित सीमा के बाहिर की वस्तु मंगवाई हो, २ भिजवाई हो, ३ शब्द करके चेताया हो, ४ रूप दिखाकर अपने भाव प्रकट किये हों, ५ कंकर आदि फेंककर दूसरे को बुलाया हो।

ग्यारहवें पडिपुन्न-पौषध-व्रत—के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-१पौषधमें शय्या संथारा न देखा हो या अच्छी तरह न देखा हो, २ प्रमार्जन (पडिलेहणा) न किया हो या बे दरकारी से किया हो, ३ उच्चार-पावसण की भूमि अच्छी तरह देखी न हो या अविधि से देखी हो, ४ पूंजी न हो या पूंजी हो तो अच्छी तरह न पूंजी हो, ५ उपवासयुक्त पौषध का सम्यक् प्रकार से पालन न किया हो।

बारहवें अतिथिसंविभाग व्रत—के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-१ सूजती (कल्पनीय) वस्तु सचित्त में डाली हो, २ सचित्त से ढांकी हो, ३ अपनी वस्तु पराई कही हो, ४ मच्छर (ईर्ष्या) भाव से दान दिया हो, ५ भोजन का समय टाल कर साधुओं से प्रार्थना की हो अथवा दान देने की भावना न भाई हो।

संलेखना के पाँच अतिचार

संलेखना के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-
१ इस लोक में राजा चक्रवर्त्ती आदि के सुख की वांछा की हो। २ परलोक में देवता इंद्र आदि के सुख की वांछा की हो। ३ जीवित रहने की आकांक्षा की हो। ४ मरने की इच्छा की हो। ५ भोगविलास की अभिलाषा की हो।

मा मज्झ हुज्झ मरणते वि सड्डापरूवणम्मि भावो।

अर्थात् मारणान्तिक कष्ट होने पर भी मेरी श्रद्धाप्ररूपणा मे फरक न हो।

शब्दार्थ—मा-मत। मज्झ-मेरे। हुज्ज–हो। मरणंते वि–मृत्यु प्राप्त हो जाने पर भी। सड्डापरूवणम्मि–श्रद्धा-प्ररूपणा में। अन्नहाभावो-विपरीत भाव।

अठारह पापस्थान का पाठ

अठारह पापस्थान आलोउं-पहिला प्राणातिपात, दूजा मृषावाद, तीजा अदत्तादान, चौथा मैथुन, पाँचवां परिग्रह, छठा क्रोध, सातवां मान, आठवां माया, नववां लोभ, दशवां § राग, ग्यारहवां द्वेष, बारहवां कलह, तेरहवां अभ्याख्यान, चौदहवां पैशुन्य, पन्दर-

---

§ राग तीन प्रकार का है, १ दृष्टिराग, २ विषयराग और ३ स्नेहराग। दृष्टि (मत) का राग दृष्टिराग है। शब्द आदि पाँच इन्द्रियों के विषयों में प्रेम, विषयराग है। तथा पुत्रादि में स्नेहराग है। दृष्टिराग के दो भेद हैं, सुदृष्टिराग और कुदृष्टिराग। वीतराग देव, निर्ग्रन्थ साधु वीतरागदेव–कथितदयामय-धर्म में प्रेम-भक्ति तथा श्रावकश्राविका पर कारुणिक और वात्सल्य-भावरूप प्रम सुदृष्टिराग हैं। कुदेव, कुगुरु और धर्म पर प्रेम करना कुदृष्टिराग है।

हवां परपरिवाद, सोलहवां रतिअरति, सतरहवां मायामृषावाद, अठारहवां मिथ्यादर्शनशल्य, इन अठारह पापस्थानों में से किसी का मैंने सेवन किया हो, कराया हो, करते हुये का अनुमोदन किया हो।

शब्दार्थ

प्राणातिपात-जीवहिंसा, प्राणियों का वध। मृषावाद-असत्य, झूठ। अदात्तादान-चोरी। मैथुन-अब्रह्मचर्य, कुशील। परिग्रह-मूर्छा, ममत्व, धनादिद्रव्य। क्रोध-रोष, गुस्सा, कोप। मान-अहंकार, घमण्ड। माया-छल, कपट। लोभ-लालच, तृष्णा। राग-प्रेम। द्वेष-वैर विरोध। कलह--क्लेश, झगड़ा। अभ्याख्यान-झूठा कलंक लगाना, दोष प्रकट करना। पैशुन्द-दूसरे की चुगली करना। परपरिवाद-दूसरे की निन्दा करना, झूठा दोष लगाना। रति-बुरे कार्योंमें चित्त का लगाना। और अरति-ध्यान, संयम आदि में चित्त का नहीं लगाना। मायामोसो-कपट सहित झूठ बोलना। मिथ्या-दर्शनशल्य-कुदेव, कुधर्म, कुशास्त्र, कुगुरु की श्रद्धा-वासना बनी रहना।

इच्छामि खमासमणो का पाठ।

इच्छामि, खमासमणो! वंदिउं, जावणिज्जाए, निसीहिआए, अणुजाणह, मे मिउग्गहं निसीहि, अहोकायं, कायसंफासं खमणिज्जो भे किलामो, अप्पकिलंताणं, बहुसुभेण, भे दिवसो वइक्कंतो? जत्ता भे! जवणिज्जं च भे! खामेमि खमासमणो! देवसियं वइक्कमं। आवस्सियाए पडिक्कमामि। खमासमणाणं देवसियाए आसायणाए तित्तीसन्नयराए जं किंचि मिच्छाए मण-दुक्कडाए वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए

लोभाए, सव्वकालियाए, सव्वमिच्छोवयाराए, सव्वधम्माइक्कम-णाए, आसायणाए, जो मे देवसिओ अइआरो कओ तस्स खमास-मणो ! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ॥

शब्दार्थ

खमासमणो-हे क्षमावान् साधु महाराज ! निसीहिआए-शरीर को पापक्रिया से हटाकर (मैं) जावणिज्जाए-शक्ति के अनुसार वंदिउं-वन्दना करना। इच्छामि-चाहता हूँ (इसलिए) मे-मुझको। मिउग्गहं-परिमित (परिमाण की हुई) भूमि में प्रवेश करने को। अणुजाणह-आज्ञा दीजिये। निसीहि-पापक्रिया को रोक कर। अहो-कायं- (आपके) चरण का। कायसंफासं अपनी काय से मस्तक से स्पर्श (करता हूँ)। (मेरे छूने से)। भे-आपको। किलामो-बाधा हुई हो तो (वह)। खमणिज्जो-क्षमा करने योग्य है अर्थात् क्षमा कीजिये। भे-आपने। अप्पकिलंताणं-अल्पग्लान अवस्था में रहकर (थोडा सा कष्ट सहकर) वहुसुभेण-बहुत शुभ क्रियाओं से। दिवसो-दिवस। वइक्कंतो-विताया ? भे-आपकी। जत्ता-संयम रूप यात्रा (निर्वाध है ?) च और। भे आपका शरीर। जवणिज्जं मन तथा इन्द्रियों की पीडा से रहित है ? खमासमणो–हे क्षमावान् साधु महाराज ! हे क्षमाश्रमण ! देवसियं-दिवस संबंधी। वइक्कमं-अपराध को। खामेमि–खमाता हूँ और। आवस्सिआए-आवश्यक क्रिया करने में जो विपरीत अनुष्ठान हुआ उससे। पडिक्कमामि-निवृत्त होता हूँ। खमासमणाणं-आप क्षमाश्रमण की। देवसिआए-दिन में की हुई। तित्तीसन्नयराए-तेतीस में से किसी भी। आसा–यणाए–आशातना के द्वारा। जं किंचि मिच्छाए-जिस किसी मिथ्या-भाव से की हुई। मणदुक्कडाए-दुष्ट मन से की हुई। वयदुक्कडाए-

दुर्वचन से की हुई। कायदुक्कडाए–शरीर की दुष्ट चेष्टा से की हुई। कोहाए-क्रोध से की हुई। माणाए-मान से की हुई। मायाए-माया से की हुई। लोभाए–लोभ से की हुई। सव्वकालियाए-सर्व-काल संबंधी। सव्वमिच्छोवयाराए–सर्व मिथ्याचारी आचरणों से परिपूर्ण। सव्वधम्माइक्कमणाए–सर्व प्रकार के धर्म का उल्लंघन करने वाली। आसायणाए-आशातना से। जो-जो। मे-मैंने। देव-सिओ-दिवस संबंधी। अइयारो-अतिचार। कओ-किया हो। खमा-समणो-हे क्षमा श्रमण! तस्स–उससे। पडिक्कमामि-निवृत्त होता हूँ। निंदामि-उसकी निन्दा करता हूँ। गरिहामि–विशेष निन्दा करता हूँ अर्थात् गुरु के सामने निन्दा करता हूँ। अप्पाणं–आत्मा को। वोसिरामि–पाप व्यापारों से निवृत्त करता हूँ।

दंसण समकित का पाठ

† दंसणसम्मत्त-परमत्थसंथवो वा, सुदिट्ठपरमत्थसेवणा–वावि। वावण्णकुदंसणवज्जणा य सम्मत्त सद्दहणा। एवं समणोवा-सएणं सम्मत्तस्स पंच अइयारा पेयाला जाणियव्वा न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं-संका, कंखा, वितिगिच्छा, परपासंडीपसंसा परपासंडीसंथवो, एवं पांच अतिचार मध्ये जो कोई अतिचार लगा हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

बारह व्रतों तथा अतिचारों का पाठ

पहिला अणुव्रत-थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, त्रसजीव बेइंदिय तेइंदिय चउरिंदिय पंचिंदिय, जान के पहिचान के संकल्प

---

† नोट–इसका अर्थ पृष्ठ २३–२४ पर आ गया है। इसलिये यहाँ नहीं लिखा गया।

करके उसमें स्वसंबन्धी-शरीर के भीतर पीड़ाकारी, सापराधी को छोड़ निरपराधी को आकुट्टी की वद्धि (हनने की वुद्धि) से हनने का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए, दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा वयसा कायसा, ऐसे पहले स्थूल प्राणातिपातविरमण-व्रत के पंच अइयारा पेयाला जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा ते आलोउं-वंधे, वहे, छविच्छेए, अइभारे, भत्तपाणवुच्छेए। जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

शब्दार्थ

अणुव्रत-महाव्रत की अपेक्षा छोटा व्रत, एकदेशव्रत। थूलाओ-स्थूल, मोटा। पाणाइवायाओ-जीवहिंसा से। वेरमणं-निवर्त्तन, अलग। पच्चक्खाण-त्याग। वधे-बांधना। वहे-निर्दयता से मारना, पीटना, गहरा घाव करना। छविच्छेए-शरीर पर की चमड़ी का छेदन करना। अइभारे-अधिक भार का लादना। भत्तपाणवुच्छेए-खाने-पीने में रुकावट डालना।

दूजा अणुव्रत थूलाओ-मुसावायाओ वेरमणं, कन्नालिए, गोवालिए, भोमालिए, णासावहारो, (थापणमोसो) कूडसक्खिज्जे, संधिकरणे मोटी कूडी साख, इत्यादिक मोटा झूठ बोलने का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं, न करेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, एव दूजा स्थूल मृषावादविरमण व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं-सहसब्भक्खाणे, रहस्सब्भक्खाणे सदारमंतभेए, मोसोवएसे, कूडलेहकरणे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थ-

मुसावायाओ-मृषावाद से, झूठसे। कन्नालिए-कन्या वर

सम्बन्धी झूठ । गोवालिए-गाय भैंस आदि सम्बन्धी झूठ । भोमालिए-भूमि सम्बन्धी झूठ । णासावहारो- (थापणमोसो) धरोहरको दवाना, अथवा धरोहरके विषयमें झूठ बोलना । कूडसक्खिज्जे-झूठी साक्षी देना । सहसब्भक्खाणे-विना विचारे किसी को कलंक लगाना । रहस्सब्भक्खाणे-अपनी स्त्री के गुप्त विचार प्रकट करना । मोसोवएसे-झूठा उपदेश करना । कूडलेहकरणे-झूठा लेख लिखना ।

तीजा अणुव्रत-थूलाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं' खात खनकर, गांठ खोलकर, ताले पर कुंजी लगाकर, मार्ग में चलते को लूट कर, पडी हुई धणियाती मोटी वस्तु जानकर लेना इत्यादि मोटा अदत्तादान का पच्चक्खाण, सगे सम्बन्धी, व्यापार सम्बन्धी तथा पडी निर्भ्रमी वस्तु के उपरान्त अदत्तादान का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं, न करेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, एवं तीजा स्थूल अदत्तादान विरमणव्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं तेनाहडे, तक्करप्पओगे, विरुद्धरज्जाइक्कमे, कूडतुल्लकूडमाणे, तप्पडिरूवग ववहारे, जो मे देवसिओ अईयारो कओ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

शब्दार्थ

अदिन्नादाणाओ-स्वामी की विना आज्ञा वस्तु को लेने से अर्थात् चोरी करने से । निर्भ्रमी-शंका-रहित । तेनाहडे-चोर की चुराई हुई वस्तु को लेना । तक्करप्पओगे-चोर को सहायता देना, चोरी करने का उपाय बताना । विरुद्धरज्जाइकम्मे-राज विरुद्ध काम करना । कूडतुल्लकूडमाणे-झूठा तोल (बाट) रखना तथा झूठा गज़ आदि माप रखना । तप्पडिरूवगववहारे-अधिक मूल्य की वस्तु में कम मूल्य की वस्तु को मिलाना । उत्तमवस्तु को दिखाकर निकृष्ट वस्तु को देना ।

चौथा अणुव्रत-थूलाओ मेहुणाओ वेरमणं, ‡ सदार संतोसिए अवसेस† मेहुणविहि का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए, देव-देवी संबंधी दुविहं, तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, तथा मनुष्य-तिर्यंच संबंधी एगविहं एगविहेणं, न करेमि कायसा, एवं चौथा स्थूल मेहुणविरमणव्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा ते आलोउं-इत्तरियपरिग्गहियागमणे, अपरिग्गहियागमणे, अनंगक्रीडा, परविवाहकरणे, कामभोगतिव्वाभिलासे जो मे देवसिओ, अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थ

सदारसंतोसिए—अपनी विवाहिता स्त्री में संतोष रखना। अवसेस मेहुणविहि—संपूर्ण मैथुन सेवन। एगविहेणं—एक प्रकार से। इत्तरियपरिग्गहियागमणे—छोटी उमर वाली विवाहिता स्व-स्त्री के साथ संग करना। अपरिग्गहियागमणे—अविवाहिता स्त्री के साथ गमन करना। अनंगक्रीडा—सृष्टि के नियम से विरुद्ध अंगों द्वारा काम क्रीडा करना। परविवाहकरना—दूसरे का विवाह संबंध कराना। कामभोगतिव्वाभिलासे—काम भोग विलास की उत्कट (तीव्र) अभिलाषा रखना।

पाँचवाँ अणुव्रत-थूलाओ परिग्गहाओ वेरमणं, धनधान्य का यथापरिमाण, खेत्तवत्थु का यथापरिमाण, हिरण्ण सुवण्ण का यथापरिमाण, दुपय चउप्पय का यथापरिमाण, कुविय धातु का

‡ स्वदारसंतोष परदारविवर्जनरूप, ऐसा पुरुष को बोलना चाहिए और स्त्री को स्वपतिसन्तोष परपुरुषविवर्जनरूप, ऐसा बोलना चाहिए।

† नोट-जिसको मूल से सब प्रकार के मैथून सेवनका पच्चक्खाण हो उसको 'अवसेस मेहुणविहि का पच्चक्खाण' इसकी जगह सव्वपगारं मेहुणं दुविहं तिविहेणं जावज्जीवाए पच्चक्खामि, ऐसा बोलना चाहिए।

यथा परिमाण जो परिमाण किया है, उसके उपरान्त अपना करके परिग्रह रखने का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए एगविहं तिविहेणं न करेमि मणसा, वयसा, कायसा, एवं पाँचवाँ स्थूल परिग्रहपरिमाण-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं-धणधन्नप्पमाणाइक्कमे, खेत्तवत्थुप्पमाणाइक्कमे, हिरण्ण-सुवण्णप्पमाणाइक्कमे दुपयचउप्पयप्पमाणाइक्कमे, कुवियप्पमाणा-इक्कमे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थ

धणधन्नप्पमाणाइक्कमे-धन और धान्य के परिमाण का उल्लंघन करना। खेत्तवत्थुप्पमाणाइक्कमे-खेत और घर आदि के परिमाण (मर्यादा) का उल्लंघन करना। हिरण्णसुवण्णप्पमा-णाइक्कमे-सोना चांदी के परिमाणका उल्लंघन करना। दुपयचउ-प्पयप्पमाणाइक्कमे-दासी दास तथा घोड़ा हाथी आदि के परिमाण का उल्लंघन करना। कुवियप्पमाणाइक्कमे-सोना चाँदी के सिवाय दूसरी धातुओं के परिमाण का उल्लंघन करना।

छट्ठा दिशिव्रत-उड्ढदिशि का यथा परिमाण, अहोदिशि का यथा परिमाण, तिरियदिशि का यथा परिमाण, एवं यथा परिमाण किया है, इसके उपरान्त स्वइच्छा से काया से आगे जाकर पांच आश्रव सेवन का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए † दुविहं तिविहेण,न करेमि न कारवेमि,मणसा वयसा कायसा,एवं छट्ठं दिशि-व्रतके पंच अइयारा जाणियव्वा,न समायरियव्वा,तं जहा ते आलोउं-उड्ढदिसिप्पमाणाइक्कमे, तिरियदिसिप्पमाणाइक्कमे, खित्तवुड्ढी, सई अन्तरद्धा, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

---

† एगविहं तिविहेण भी कोई कोई बोलते हैं।

शब्दार्थ—

उड्ढदिसिप्पमाणाइक्कम्मे-ऊर्ध्व (ऊँची) दिशा के परिमाण (मर्यादा) का उल्लंघन। अहोदिसिप्पमाणइक्कमे-अधो (नीचे की) दिशा के परिमाण का उल्लंघन। तिरियदिसिप्पमाणाइक्कमे-तिरछी दिशा के परिमाण का उल्लंघन। खित्तवुड्ढी-क्षेत्र के परिमाण में सन्देह होने पर आगे चलना।

सातवाँ व्रत—उवभोगपरिभोगविहिं पच्चक्खायमाणे, १ उल्लणियाविहि, २ दंतणविहि, ३ फलविहि, ४ अब्भंगणविहि, ५ उवट्टणविहि, ६ मज्जणविहि ७ वत्थविहि, ८ विलेवणविहि, ९ पुप्फविहि, १० आभरणविहि, ११ धूवविहि, १२ पेज्जविहि, १३ भक्खणविहि, १४ ओदणविहि, १५ सूपविहि १६ विगयविहि, १७ सागविहि, १८ महुरविहि, १९ जिमणविहि, २० पाणीयविहि, २१ मुखवासविहि, २२ वाहणविहि, २३ उवाहणविहि, २४ सयणविहि, २५ सचित्तविहि, २६ दव्वविहि इत्यादिका यथा परिमाण किया है, इसके उपरान्त उवभोगपरिभोग वस्तु को भोगनिमित्त से भोगने का पच्चक्खाण जावज्जीवाए, एगविह तिविहेणं, न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा, एवं सातवाँ उपभोग-परिभोगे, दुविहे पन्नत्ते, तं जहा—भोयणाओ य, कम्मओ य. भोयणाओ समणोवासयाणं पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा ते आलोउं-सचित्ताहारे सचित्तपडिबद्धाहारे, अप्पोलिओसहिभक्खणया, दुप्पोलिओसहिभक्खणया, तुच्छोसहिभक्खणया, कम्मओ णं समणोवासयाणं पन्नरस कम्मादाणाइं, जाणियव्वाइं,न समायरियव्वाइं तं जहा ते आलोऊ—१ इंगालकम्मे, २ वणकम्मे, ३ साडीकम्मे, ४ भाडीकम्मे, ५ फोडीकम्मे, ६ दंतवाणिज्जे, ७ लक्खवाणिज्जे, ८ रस—

वाणिज्जे, ९ केसवाणिज्जे, १० विसवाणिज्जे, ११ जतपीलणकम्मे, १२ निल्लंछणकम्मे, १३ दवग्गिदावणया, १४ सरदहतलावसोस-णया, १५ असईजणपोसणया, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

शब्दार्थ

उल्लणियाविहि—शरीर पोंछने के अंगोछे आदि वस्त्रों को काम में लाना । दंतणविहि-दंतधावण (दतौन-दांतन) करना । फलविहि-आम, अमरूद आदि फलों का सेवन करना । अब्भंगण-विहि—शरीरपर तैलादि का मर्दन करना । उवट्टणविहि—शरीर पर उबटन (पीठी आदि) की मालिश करना । मज्जणविहि—स्नान करना । वत्थविहि—वस्त्र पहनना । विलेवणविहि—चन्दनादि का लेपन करना । पुप्फविहि-पुष्पों का सेवन करना । आभरणविहि—आभूषण पहनना । धूवविहि-धूप जलाना । पेज्जविहि—पीने की वस्तुओं का सेवन करना । भक्खणविहि-लड्डू पेडा आदि वस्तुओं का भक्षण करना । ओदणविहि-चावल, गेहूं आदि का सेवन करना । सूपविहि—मूंग, चना आदि दाल का सेवन करना । विगयविहि—घी, तेल, दूध दही आदि का सेवन करना । महुरविहि-मेवा आदि पदार्थों का सेवन करना । जिमणविहि-जीमना, भोजन करना । पाणीयविहि-पानी पीना । मुखवासविहि—लोंग, इलायची, सुपारी आदि मुख को सुगन्धित करने वाली वस्तुओं का सेवन करना । वाहणविहि-हाथी, घोड़े, रथ, गाड़ी इत्यादि की सवारी करना । उवाणहविहि-चमड़े के जूते मोजे आदि पहनना । सयणविहि—शय्या, पलंग आदि का सेवन करना । सचित्तविहि—सचित्त वस्तुओं का सेवन करना । दव्वविहि—खाने, पीने, पहनने आदि के काममें आने वाले सचित्त या अचित्त पदार्थ जो ऊपर के नियमों से बचे हुए

हैं उनका सेवन करना । उवभोग-जो पदार्थ एक बार भोगने में आता है, जैसे अन्न, जल आदि । परिभोग-जो पदार्थ बार-बार भोगने में आता है, जैसे वस्त्र, आभूषण इत्यादि । दुविहे-दो प्रकार का । पण्णत्ते-कहा गया है । भोयणओ-भोजन की अपेक्षा से । समणोवासयाणं-श्रावकों के । सचित्ताहारे-सचित्त वस्तु का भोजन करना । सचित्तपडिबद्धाहारे-सचित्त वस्तु से सम्बन्ध रखने वाली वस्तु का भोजन करना । अप्पोलिओसहिभक्खणया-बिना पकी वस्तु का आहार करना, जिनमें जीव के प्रदेशों का सम्भव हो, ऐसी तत्काल पीसी हुई या मर्दन की हुई वस्तु का भोजन करना । दुप्पलिओसहिभक्खणया-असमान रीति से पकाया हुआ भुट्टा प्रमुख का भोजन करना । तुच्छोसहिभक्खणया-तुच्छ औषधि (जिसमें सार भाग कम है ऐसी वस्तु सीताफल आदि) का भक्षण करना ।

आठवां अणट्ठादण्डविरमणव्रत-चउव्विहे अणट्ठदंडे पण्णत्ते तं जहा-अवज्झाणाचरिए, पमायाचरिए, हिंसप्पयाणे पावकम्मोवएसे, एवं आठवां अणट्ठादंड सेवन का ‡पच्चक्खाण. (जिसमें आठ आगार-आए वा, राए वा, नाए वा, परिवारे वा, देवे वा, नागे वा, जक्खे वा, भूए वा एत्तिएहिं, आगारेहिं, अन्नत्थ) जावज्जीवाए, दुविहं, तिविहेणं, न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा, एवं आठवां अणट्ठादंडविरमणव्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउ-कंदप्पे, कुक्कुइए, मोहरिए, संजुत्ताहिगरणे, उवभोगपरिभोगाइरित्ते जो मे देवसिओ, अइयारो कओ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

---

‡ कंस में दिया हुआ पाठ कितनीक प्रतियों में मिलता है ।

शब्दार्थ

अणट्ठादंड-विना प्रयोजन ऐसे काम करना, जिनमें जीवों की हिंसा होती है अथवा जीवों को पीड़ा होती है। अवज्झाणाचरिए-कुध्यान करना, अर्थात् किसी को मारने का, हानि पहुँचाने का विचार करना। पमायचरिये-प्रमादपूर्वक आचरण करना अर्थात् ‡ मद्य विषय कषाय निद्रा और विकथा में लगे रहना तथा प्रमाद से काम करना जिससे जीवों की हिंसा होती है, जैसे कि विना देखें चलना फिरना, वस्तु को उठाना, रखना, पानी, तैल, घी आदि के वर्तनों को उघाड़ा रखना इत्यादि। हिंसप्पयाणे-जिनसे जीवों का घात होता है ऐसी तलवार, बन्दूक, कुदाली,फावड़ा आदि वस्तुएँ दूसरे को देना। पावकम्मोदएसे-जिन कामों से जीव की हिंसा होती है, ऐसे मकान बनवाने आदि का उपदेश देना। कन्दप्पे-काम को उत्पन्न करने वाली कथाएँ करना, भण्ड वचन बोलना। कुक्कुइए-दूसरों को हँसाने के लिये भांडों की तरह हँसी दिल्लगी करना, या किसी की नकल करना। मोहरिए-ढीठता से निरर्थक बोलना। संजुत्ताहिगरणे-पूरी तरह काम देने वाले ऊखल मूसल तलवार आदि हथियार या औजार देना। उवभोगपरिभोगा-इरित्ते-उपभोग और परिभोग आनेवाली खाने पीने पहनने आदि वस्तुओं का अधिक संग्रह करना।

नववां सामायिकव्रत-सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावनियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं, न करेमि न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा, ऐसी सद्दहणा परूवणा तो है सामायिक का अवसर आये

---

‡ गाथा—मज्जं विसयकसाया, निद्दा विगहा य पंचमी भणियां।
एए पंच पमाया, जीवं पाडन्ति संसारे ॥१॥

सामायिक करूँ तब फरसना करके शुद्ध होऊँ, एवं नववें सामायिक व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं मणदुप्पणिहाणेणं, वयदुप्पणिहाणेणं, कायदुप्पणिहाणेणं, सामाइयस्स सइ अकरणयाए, सामाइअस्स अणवट्ठियस्स करणयाए जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थ—

सावज्ज-पाप युक्त। जोगं—मन, वचन काया की प्रवृत्ति। जावनियमं-नियमपर्यन्त। पज्जुवासामि-उपासना करता हूँ, सेवन करता हूँ। सद्दहणा-श्रद्धा, रुचि। परूवणा-विवेचना। मणदुप्पणिहाणेणं-मन में बुरे विचार उत्पन्न करने से। वयदुप्पणिहाणेणं-कठोर या पापजनक वचन बोलने से। कायदुप्पणिहाणेणं-बिना देखे पृथिवी पर बैठने उठने आदि से। सामाइयस्स सइअकरणयाए-सामायिक करनेका काल विस्मरण करने से। सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणयाए-सामायिक का समय होने से पहले ही समाप्त कर लेने से।

दसवां देसावगासिकव्रत- दिन प्रति प्रभात से प्रारंभ करके, पूर्वादिक छहों दिशा की जितनी भूमि की हद रक्खी हो, उसके उपरान्त स्वइच्छा से काया से आगे जाकर पांच आश्रव सेवने का पच्चक्खाण जाव अहोरत्तं, दुविहं तिविहेणं, न करेमि न कारवेमि, मणसा वयसा कायसा, जितनी भूमिका की हद रक्खी उसमें जो द्रव्यादिक की मर्य्यादा की है, उसके उपरान्त उपभोग-परिभोग निमित्त से भोगने का पच्चक्खाण जाव अहोरत्तं एगविहं तिविहेणं, न करेमि मणसा, वयसा कायसा, एव दसवां देसावगासिक व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरिव्वा, तं जहा ते आलोउं-आणवणप्पओगे, पेसवणप्पओगे, सद्दाणुवाए, रूवाणुवाए, बहिया पुग्गल-

पक्खेवे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

शब्दार्थ–

जाव अहोरत्त-रात्रि दिवस पर्यन्त । आणवणप्पओगे-मर्यादा किये हुये क्षेत्र से आगे की वस्तु को मँगाना । पेसवणप्पओगे-परिणाम किये हुए क्षेत्र से आगे की वस्तुको मँगवाने के लिये या लेन-देन करने के लिये अपने नौकर आदि आज्ञाकारी मनुष्य को भेजना । सद्दाणुवाए-सीमा के बाहर के मनुष्य को खाँस करके या और किसी शब्द के द्वारा अपना ज्ञान कराना । रूवाणुवाए-सीमा के बाहर के मनुष्य को अपने पास बुलाने के लिए अपना रूप दिखाना । बहिय पुग्गलपक्खेवे-सीमा से बाहर के मनुष्य को बुलाने के लिए कंकर आदि फेंकना ।

ग्यारहवां पडिपुन्न–पौषधव्रत–असणं, पाणं, खाइमं साइमं, का पच्चक्खाण, अबंभसेवन का पच्चक्खाण, अमुक, मणिसुवर्ण का पच्चक्खाण, माल-वन्नग-विलेवण का पच्चक्खाण, सत्थमुसलादिक सावज्ज जोग सेवन का पच्चक्खाण, जाव अहोरत्तं, पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, ऐसी सद्दहणा परूवणा तो है, पोसहका अवसर आये पोसह करूँ, तब फरसना करके शुद्ध होऊँ, एवं ग्यारहवां पडिपुन्नपोषधव्रतके पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा ते आलोउं-अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसेज्जासंथारए, अप्पमज्जियदुप्पमज्जिय-सेज्जासंथारए, अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियउच्चारपासवणभूमि, अप्पमज्जिय-दुप्पमज्जियउच्चारपासवणभूमि, पोसहस्स सम्मं अणणुपालणया, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

शब्दार्थ—

पडिपुन्न-परिपूर्ण । पोषधव्रत-पाप रहित होकर, संवर करणी से आत्मा का या धर्म का पोषण करना । असणं-दाल, भात, रोटी आदि अन्न की वस्तु तथा पाँच विगय । पाणं—जल, धोवन आदि पीने की वस्तु । खाइमं-फल, मेवा ओषध आदि । साइमं-लौंग, सुपारी, इलायची, चूर्ण आदि भोजन के बाद खाने योग्य स्वादिष्ट पदार्थ । अबंभसेवन-मैथुन सेवन । माला-पुष्प-मालाव.न्नग-सुगन्धित चूर्णादि । विलेवण-चन्दन आदि का लेप करना । सत्थमूसलादिक-मुसल आदि शस्त्र । अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसेज्जासंथारए-सोने के लिए कुश, कम्बल आदि का जो संस्तारक (आसन) है, उसको नहीं देखने या अच्छी तरह नहीं देखने से । अप्पमज्जियदुप्पमज्जियसेज्जासंथारए-सोने के लिए कुश, कम्बल आदि का जो संस्तारक (आसन) है, उसका प्रमार्जन नहीं करना, या बुरी तरह प्रमार्जन करना । अप्पमज्जियदुप्पमज्जियउच्चारपासवणभूमि-मल मूत्र त्याग करने की भूमि का प्रमार्जन नहीं करना, या बुरी तरह प्रमार्जन करना । अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियउच्चारपासवणभूमि-मल मूत्र त्याग करने की भूमि का पडिलेहन नहीं करना, या बुरी तरह पडिलेहन करना सम्मं-सम्यक् प्रकार । अणणुपालणया-पालन नहीं करना ।

बारहवां अतिथिसंविभागव्रत-समणे निग्गंथे फासुयएसणिज्जेण-असणपाणखाइमसाइमवत्थपडिग्गहकंबलपायपुंछणेणं, पाडिहारियपीढफलगसेज्जासंथारएणं, ओसहभेसज्जेणं, पडिलाभेमाणे विहरामि, ऐसी मेरी सद्दहणा परूवणा तो है, साधु, साध्वी का योग मिलने पर निर्दोष दान दूं, तब शुद्ध होऊँ । एवं बारहवें अतिथिसंविभाग-

व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा ते आलोउं-सचित्तनिक्खेवणया, सचित्तपिहणया, कालाइक्कमे, परोवएसे, मच्छरियाए जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

शब्दार्थ

अतिथि--जिसकी कोई तिथि नियत नहीं है वह । संविभाग-कुछ भाग, हिस्सा । समणे-श्रमण, साधु । निग्गन्थे-निर्ग्रन्थ, पंच महाव्रत धारी । फासुयएसणिज्जेणं-प्रासुक (अचित्त) एषणीय (उद्गमादि दोष-रहित) वस्तु । असणपाणखाइमसाइमवत्थ-पडिग्गहकम्बलपायपुंछणेणं-अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य, वस्त्र, पात्र, कम्बल, पाद पोंछन (पाँव पूछने का रजोहरण आदि) । पाडिहारियपीढफलगसेज्जासंथारए-वापिस लौटा देने योग्य (जिस वस्तु को साधु कुछ काल तक रख कर बाद में लौटा देते हैं) ऐसे चौकी पट्टा शय्या के लिये संस्तारक (तृण का आसन) ओसहभेसज्जेणं-औषध और कई औषधों के संयोग से बनी हुई गोलियाँ आदि । पडिलाभेमाणे-देता हुआ । विहरामि-विहार करूँ, (रहूँ) । सचित्तनिक्खेवणया-साधु को नहीं देने की बुद्धि से अचित वस्तु पर सचित्त जलादि को रखना । सचित्तपिहणया-साधु को नहीं देने की बुद्धि से अचित वस्तु को सचित वस्तु से ढँकना । कालाइक्कमे-साधु के भोजन के काल का उल्लंघन करना अर्थात् भोजन के समय से पहले या पीछे साधु को भोजन के लिए यह विचार कर के प्रार्थना करना कि इस समय साधु भोजन नहीं लेंगे और मेरा दानीपना प्रकट होगा । परोवएसे-नहीं देने की बुद्धि से अपनी वस्तु दूसरे की बताना अथवा इस दान से मेरे

माता-पिता आदि को पुण्य प्राप्त हो ऐसा भाव रखना, अथवा दूसरे को कहना कि मुनीश्वर आवे तो अन्न, जलादि का दान कर देना। मच्छरियाए—अमुक पुरुष ने दान दिया है क्या मैं उससे कृपण हूँ या हीन हूँ ? इस प्रकार ईर्षा करके दान देने में प्रवृत्ति करना। दान देकर पश्चात्ताप करना।

बड़ी संलेखना का पाठ।

अह भंते ! अपच्छिममारणंतियसंलेहणा झूसणा आराहणा पौषधशाला पूंज, पुंजके उच्चार-पासवण भूमिका पडिलेह, पडिलेहके गमणागमणे पडिक्कम २ के दर्भादिक संथारा संथार २ के दर्भादिक संथारा दुरूह, दुरूहके पूर्व तथा उत्तर दिशि सन्मुख पल्यंकादिक आसन से बैठ २ के 'करयलसंपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलि कट्टु एवं वयासि- 'नमोत्थु णं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं" ऐसे अनन्त सिद्धों को नमस्कार करके, "नमोत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपाविउकामाण" जयवंते वर्तमान काले महाविदेह क्षेत्र में विचरते हुए तीर्थंकरों को नमस्कार करके अपने धर्माचार्यजी को नमस्कार करता हूं। साधुप्रमुख चारों तीर्थों को खमाके, सर्व जीव राशि को खमाके पूर्व जो व्रत आदरे है उनमें जो अतिचार दोष लगे हों वे सर्व आलोचके पडिक्कम करके निंदके निःशल्य हो करके, सव्वपाणाइवायं पच्चक्खामि, सव्वं मुसावायं पच्चक्खामि, सव्वं अदिन्नादाणं पच्चक्खामि, सव्वं मेहुणं पच्चक्खामि, सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि सव्वं कोहं माणं जाव सव्वं मिच्छादंसणसल्लं, सव्वं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, करंतं पि अन्न न समणुजाणामि, मणसा वयसा

कायसा, ऐसे अठारह पापस्थानक पच्चक्ख के, सव्वं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि, जावज्जीवाए ऐसे चारों आहार पच्चक्ख के, जं पि य इमं सरीरं इट्ठं, कंतं, पियं, मणुण्णं, मणामं, थिज्जं, विसासियं, संमयं, अणुमयं बहुमयं, भण्ड-करण्डगसमाणं, रयणकरंडगभूयं मा णं सीया, मा णं उण्हा, मा ण खुहा, मा णं पिवासा, मा णं बाला, मा णं चोरा, मा णं दंसमसगा, मा णं वाहियं, पित्तियं, कप्फियं, संभीमं, सन्निवाइयं, विविहा रोगा-यंका परिसहा उवसग्गा फासा फुसंतु एवं पि य णं चरिमेहिं उस्सा-सनिस्सासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु ऐसे शरीर वोसरा के काल "अणवकंखमाणे विहरामि" ऐसी मेरी सद्दहणा परूवणा तो है-फरसना करूँ तो शुद्ध होऊँ, ऐसे अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझूस-णाआराहणाए पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा ते आलोउं-इहलोगासंसप्पओगे, परलोगासंसप्पओगे, जीवियासंसप्प-ओगे मरणासंसप्पओगे, कामभोगासंसप्पओगे, मा मज्झ हुज्ज मर-णंते वि सड्ढा-परूणम्मि अन्नहाभावो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

शब्दार्थ—

अपच्छिममारणान्तिय–सब के पश्चात् मृत्यु के समीप होने-वाली। संलेहणा-संलेखना अर्थात् जिसमें शरीर कषाय ममत्व आदि कृश (दुर्बल) किये जाते हैं ऐसा विशेष तप। झूसणा–संलेखना का सेवन करना। आराहणा-संलेखना का अखण्डकाल तक पालन करना। पूंज पूंज के-प्रमार्जन (पडिलेहण) करके उच्चारपासव-णभूमिका-मल मूत्र त्यागने की भूमि। पडिलेह पडिलेह के-पडि-लेहन करके, देख करके। गमणागमणे-जाना आना। पडिक्कम पडिक्कम के-त्याग कर। दुरूह दुरूह के-संथारे पर आरूढ होकर।

माता-पिता आदि को पुण्य प्राप्त हो ऐसा भाव रखना, अथवा दूसरे को कहना कि मुनीश्वर आवे तो अन्न, जलादि का दान कर देना। मच्छरियाए—अमुक पुरुष ने दान दिया है क्या मैं उससे कृपण हूँ या हीन हूँ ? इस प्रकार ईर्षा करके दान देने में प्रवृत्ति करना। दान देकर पश्चात्ताप करना।

बडी संलेखना का पाठ।

अह भंते ! अपच्छिममारणंतियसंलेहणा झूसणा आराहणा पौषधशाला पूंज, पुंजके उच्चार-पासवण भूमिका पडिलेह, पडिलेहके गमणागमणे पडिक्कम २ के दर्भादिक संथारा संथार २ के दर्भादिक संथारा दुरुह, दुरुहके पूर्व तथा उत्तर दिशि सन्मुख पल्यंकादिक आसन से बैठ २ के 'करयलसंपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासि- 'नमोत्थु णं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं" ऐसे अनन्त सिद्धों को नमस्कार करके,"नमोत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपाविउकामाणं" जयवंते वर्तमान काले महाविदेह क्षेत्र में विचरते हुए तीर्थंकरों को नमस्कार करके अपने धर्माचार्यजी को नमस्कार करता हूँ। साधुप्रमुख चारों तीर्थों को खमाके, सर्व जीव राशि को खमाके पूर्व जो व्रत आदरे हैं उनमें जो अतिचार दोष लगे हों वे सर्व आलोचके पडिक्कम करके निंदके निःशल्य हो करके, सव्वपाणाइवायं पच्चक्खामि, सव्वं मुसावायं पच्चक्खामि, सव्वं अदिन्नादाणं पच्चक्खामि, सव्वं मेहुणं पच्चक्खामि, सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि सव्वं कोहं माणं जाव सव्वं मिच्छादंसणसल्लं, सव्वं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि, करतं पि अन्नं न समणुजाणामि, मणसा वयसा

कायसा, ऐसे अठारह पापस्थानक पच्चक्ख के, सव्वं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि, जावज्जीवाए ऐसे चारों आहार पच्चक्ख के, जं पि य इमं सरीरं इट्ठं, कंतं, पियं मणुण्णं, मणामं, थिज्जं, विसासियं, संमयं, अणुमयं बहुमयं, भण्ड-करण्डगसमाणं, रयणकरंडगभूयं मा णं सीया, मा णं उण्हा, मा णं खुहा, मा णं पिवासा, मा णं वाला, मा णं चोरा, मा णं दंसमसगा, मा णं वाहियं, पित्तियं, कप्फियं, संभीमं, सन्निवाइयं, विविहा रोगा-यंका परिसहा उवसग्गा फासा फुसंतु एवं पि य णं चरिमेहिं उस्सा-सनिस्सासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु ऐसे शरीर वोसरा के काल "अणवकंखमाणे विहरामि" ऐसी मेरी सद्दहणा परूवणा तो है-फरसना करूँ तो शुद्ध होऊँ, ऐसे अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझूस-णाआराहणाए पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तं जहा ते आलोउं—इहलोगासंसप्पओगे, परलोगासंसप्पओगे, जीवियासंसप्प-ओगे मरणासंसप्पओगे, कामभोगासंसप्पओगे, मा मज्झ हुज्ज मर-णंते वि सड्ढा-परूवणम्मि अन्नहाभावो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

शब्दार्थ—

अपच्छिममारणान्तिय—सब के पश्चात् मृत्यु के समीप होने-वाली । संलेहणा-संलेखना अर्थात् जिसमें शरीर कषाय ममत्व आदि कृश (दुर्बल) किये जाते हैं ऐसा विशेष तप । झूसणा—संलेखना का सेवन करना । आराहणा-संलेखना का अखण्डकाल तक पालन करना । पूंज पूंज के-प्रमार्जन (पडिलेहण) करके । उच्चारपासव-णभूमिका-मल मूत्र त्यागने की भूमि । पडिलेह पडिलेह के-पडि-लेहन करके, देख करके । गमणागमणे-जाना आना । पडिक्कम पडिक्कम के-त्याग कर । दुरूह दुरूह के-संथारे पर आरूढ होकर ।

करयलसंपरिग्गहियं–दोनों हाथ जोडकर। सिरसावत्तं-मस्तक के आवर्तन करके। मत्थए अंजलिं कट्टु-मस्तक पर हाथ जोड़कर। एवं वयासी-इस प्रकार बोले। नमोऽत्थु णं-नमस्कार हो। अरिहं-ताणं भगवंताणं-अरिहन्त भगवान् को। जाव संपत्ताणं–मोक्ष को प्राप्त हुए, उनको। संपाविउकामाणं-मोक्ष प्राप्ति के सन्निकट। निःशल्य-माया, मिथ्यादर्शन और निदान (नियणा) इन तीन शल्यों से रहित। मिच्छादंसणसल्लं–मिथ्यादर्शन रूपी कंटक। अकरणिज्जं-नहीं करने योग्य। इट्ठं-इष्ट, इच्छानुकूल (मर्जी माफिक) कंतं-कांतियुक्त। पियं-प्रिय, प्यारा। मणुण्णं-मनोज्ञ. मनोहर। मणामं-अत्यन्त मनोहर। धिज्जं–धीरज रखनेवाला, धैर्यशाली। विसासियं-विश्वास करने योग्य। संमयं-सन्मान को प्राप्त। अणुमयं-विशेष सन्मान को प्राप्त। बहुमयं-बहुत सन्मान को प्राप्त। भण्डकरण्डगसमाणं-आभूषणों के करण्ड (करण्डिया डिब्बा) के समान। रयणकरण्डगभूय-रत्नों के करण्ड के समान। मा णं सीयं-शीत (सर्दी) न हो। मा णं उण्हं-उष्णता (गर्मी) न हो। मा णं खुहा-भूख न लगे। मा णं पिवासा-प्यास न लगे. मा णं वाला-सर्प न काटे। मा णं चोरा-चोरों का भय न हो। मा णं दंसमसगा-डाँस और मच्छर न सतावें। मा णं वाहियं-व्याधियाँ प्राप्त न हों। पित्तियं-पित्त। कप्फियं-कफ। संभीमं-भयंकर। सन्निवाइयं-सन्नि-ताप। (सन्निपात)। विविहा-अनेक प्रकार के। रोगायंका-रोग संबंधी पीडाएँ। परिसहा-क्षुधा आदि परीषह (कर्म का-क्षय करने के लिये क्षुधा आदि की बाधा को शान्ति पूर्वक सहना।) उवसग्गा-उपसर्ग (देव तिर्यंच आदि द्वारा दिया गया कष्ट।) फासा फुसन्तु-सम्बन्ध करें। चरिमेहिं-अन्त के। उस्सासनिस्सासेहिं-उच्छ्वास निश्श्वासों (श्वासोच्छ्वासों) से वोसिरामि-त्याग करता हूँ। त्ति-

कट्टु-ऐसा करके । कालं अणवकंखमाणे-काल की आकांक्षा (वांछा) नहीं करता हुआ । विहरामि-विहार करता हूँ, विचरता हूँ । इह-लोगासंसप्पओगे-इस लोकके चक्रवर्ती आदिके सुखों की इच्छा करना. परलोगासंसप्पओगे-परलोक के इन्द्रके सुखों की इच्छा करना । जीवियासंसप्पओगे - महिमा, पूजा न देखकर अथवा विशेष दुःख होने से मरने की इच्छा करना । कामभोगासंसप्पओगे-काम भोग की इच्छा करना । मा-मत । मज्झ-मेरे । हुज्ज-हो । मरणंते वि-मृत्यु हो जाने पर भी । सद्धापरूवणम्मि-श्रद्धा प्ररूपणा में । असद्दाभावो-विपरीत भाव ।

समुच्चय का पाठ

यों समकित पूर्वक बारह व्रत संलेखना सहित, इसमें जो कोई अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार जाणते अजाणते मन वचन काया से सेवन किया हो करवाया हो अनुमोदन किया हो, तो अनंत सिद्ध केवलज्ञानी की आत्मा की साक्षी से तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

शब्दार्थ

यों ऊपर कहे समकित सहित १२ (बारह) व्रत संलेखना सहित उसमें १ अतिक्रम-त्याग की हुई वस्तु को भोगने की अभिलाषा की हो, २ व्यतिक्रम-त्याग की हुई वस्तु को ग्रहण करने के लिये गमनागमन किया हो, ३ अतिचार-त्याग की वस्तु को भोगवने योग्य बनाई हो, ४ अनाचार-त्याग की वस्तु भोग ली हो । इन चारों प्रकारों में से कोई भी दोष, जाणते-जानकर लगा हो । अजाणते-अजान में लगा हो । मन से-व्रतभंग का विचार किया हो । वचन से-व्रतभंग करने का उच्चारण किया हो । काया से-व्रतभंग जैसा काम किया हो । सेवे हों-यह काम स्वयं किये हों ।

सेवाए हों-दूसरे के पास से सेवन कराये हों । अनुमोदन किया-दूसरों ने व्रत भंग किया, उसे अच्छा जाना हो, तो अनन्त सिद्ध भगवान् और केवलज्ञानी से तो कुछ छिपा नहीं है और स्वयं की आत्मा भी जानती है, इसलिये इन तीनों की साक्षी से, तस्स-उसका में पश्चात्ताप करता हूँ सो मिच्छा मि दुक्कडं-वह पाप दूर होवे ।

चउदहस्थान सम्मूर्च्छिम मनुष्य का पाठ

चउदहस्थान सम्मूर्च्छिम जीव आलोउं १ उच्चारेसु वा, २ पासवणेसु वा, ३ खेलेसु वा, ४ संघाणेसु वा, ५ वंतेसु वा, ६ पित्तेसु, वा, ७ सोणिएसु वा, ८ पूएसु वा, ९ सुक्केसु वा, १० सुक्कपुग्गलपरिसाडिएसु वा. ११ विगयजीवकलेवरेसु वा, १२ इत्थी-पुरिससंजोगेसु वा, १३ नगरनिधमणेसु वा, १४ सव्वेसु चेव असु-इट्ठाणेसु वा, चौदह प्रकार के सम्मूर्च्छिम मनुष्यों की विराधना की हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कड ।

शब्दार्थ

उच्चारेसु-विष्ठा में । वा-अथवा । २ पासवणेसु वा-पेशाव में । ३ खेलेसु वा-मुख के खेंकार में ।४ संघाणेसु वा-नाक के श्लेष्म (सेडे) में । ५ वंतेसु वा-उल्टी (वमन) में । ६ पित्तेसु वा-पित्त में । ७ सोणिएसु वा-रक्त (खून) में ।८ पूइएसु वा-पू(राध)में । ९ सुक्केसु वा-शुक्र वीर्य में । १० सुक्कपुग्गल-परिसाडिएसु वा-वीर्य के सूखे पुद्गल, पीछे गीले होवें उनमें । ११ विगयजीव-कलेवरेसु वा-स्त्री पुरुष के संयोग में अर्थात् मैथुन सेवन करने में । १३ नगरनिधमणेसु वा-शहरों की नालियों (गटारों) में । १४ सव्वेसु-सभी । चेव-निश्चयार्थ । असुइठाणेसु वा-अशुचि स्थानों में

अर्थात् जिन स्थानों में मनुष्य, प्राणी सम्बन्धी विष्ठा, रक्त, पू, वगैरह वस्तु डाली जाय, ऐसे उकरडे आदि स्थानों में । उपर्युक्त १४ स्थानों के जीवों की विराधना हुई हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं-वह मेरा पाप दूर हो ।

भावार्थ—अपने आप उत्पन्न होने वाले जीवों को 'सम्मूच्छिम' कहते हैं, वे मनुष्य के १०१ क्षेत्रों में होते हैं । मल, मूत्र, मुखका खंकार, नाक का मैल, वमन, पित्त, खून, पीप, वीर्य, वीर्य के सूखे पुद्गल पीछे गीले हो जावें तो उनमें, मरा हुआ मनुष्य का शरीर, स्त्री-पुरुषों-संयोग, शहरों की नालियां, सभी अशुचि स्थान, उपर्युक्त १४ स्थानों में मनुष्य के शरीर में से जीव निकलने के बाद अन्तर्मुहूर्त में (पुद्गलों के शीतल होने पर) असंख्यात असंज्ञी सम्मूर्च्छिम मनुष्य उत्पन्न हो जाते हैं, इसलिये श्रावक-श्राविकाओं को बहुत सावधानी से रहना चाहिये, जहां तक बने रक्षा करनी चाहिये, इतने पर भी विराधना हुई हो तो वह मेरा पाप निष्फल हो ।

पच्चीस मिथ्यात्व का पाठ

१ अभिग्रहिकमिथ्यात्व, २ अनाभिग्रहिकमिथ्यात्व, ३ अभिनिवेशिकमिथ्यात्व ४ संशयिकमिथ्यात्व, ५ अनाभोगमिथ्यात्व, ६ लौकिकमिथ्यात्व, ७ लोकोत्तरमिथ्यात्व, ८ कुप्रावचनिकमिथ्यात्व, ९ जिनमार्ग से न्यून कहे तो मिथ्यात्व, १० जिनमार्ग से अधिक कहे तो मिथ्यात्व, ११ जिनमार्ग से विपरीत कहे तो मिथ्यात्व, १२ जीव को अजीव कहे तो मिथ्यात्व १३ अजीव को जीव कहे तो मिथ्यात्व, १४ धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व, १५ अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व १६ साधु को-

असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, १७ असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, १८ मोक्षमार्ग को संसार का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, १९ संसार के मार्ग को मोक्ष का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, २० मोक्ष गये को मोक्ष नहीं गये श्रद्धे तो मिथ्यात्व, २१ मोक्ष नहीं गये को मोक्ष गये श्रद्धे तो मिथ्यात्व, २२ अविनय मिथ्यात्व, २३ आशातना-मिथ्यात्व, २४ अज्ञानमिथ्यात्व, २५ अक्रियामिथ्यात्व, इन पच्चीस प्रकार के मिथ्यात्वों में से किसी मिथ्यात्व का सेवन किया हो, सेवन करवाया हो, सेवन करनेवाले का अनुमोदन किया हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

शब्दार्थ

अभिग्रहिक मिथ्यात्व-अपने ग्रहण किये हुए झूठे मत को सच्चा मानना । २ अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व-किसी मत को ग्रहण न कर सभी मत-मतांतरों को सच्चा मानना । ३ अभिनिवेशिक- मिथ्यात्व-अपना ग्रहण किया हुआ मत झूठा है, ऐसा समझने पर भी हठाग्रह न छोड़ना । ४ संशयिक मिथ्यात्व-सर्वज्ञ प्रणीत शास्त्र की बातें समझ में नहीं आने से यह झूठ है, ऐसा संशय करना । ५ अनाभोग मिथ्यात्व-धर्म अधर्म का भेद भाव कुछ भी न समझना, जिज्ञासा रहित संशयात्मक स्थिति वाला होना । ६ लौकिक मिथ्यात्व-इस लोक में देव, गुरु और धर्म की जो विपरीत स्थापना की है, उसके अनुसार चलना, तथा उसके नाम के पर्व करना, और हिंसा में धर्म मानना । ७ लोकोत्तर मिथ्यात्व-चौंतीस अतिशय आदि तीर्थंकर के गुण जिनमे नहीं-गोशालावत्, तीर्थंकर नाम धारण कर लिया, उनको तथा धातु पाषाण आदि की प्रतिमा को तीर्थंकर नाम रख दिया, उसे तीर्थंकर मानना, पंच महाव्रतादि साधु के गुण जिनमें नहीं, ऐसे

जैनसाधु के वेश-वाले को गुरु मानना, और इस लोक सम्बन्धी सुख, धन, स्त्री पुत्रादिक की प्राप्ति के लिये जैन धर्म की क्रिया सामायिक पौषध आदि व्रत करना । ८ कुप्रावचनिक मिथ्यात्व–तीन सौ तिरसठ पाखंडियों के मतों को मानना, और यज्ञ, होम, फल-फूल-धूप दीप चढ़ानें में धर्म को मोक्षदाता मानना । ९ जिन-मार्ग से न्यून कहे तो मिथ्यात्व–केवलज्ञानी के कथन में कभी श्रद्धा न कर, अपने मत को विपरीत करने वाले शास्त्र के अर्थ को छिपा देना । तथा जीव को तंदुलमात्र अंगुष्ठमात्र कहना । १० जिनमार्ग से अधिक कहे तो मिथ्यात्व–साधु के धर्मोपकरण को परिग्रह वताना, साधु को साफ नग्न रहने का कहना इत्यादि, तथा जीव को ब्रह्मांडव्यापी कहना । ११ जिनमार्ग से विपरीत कहे तो मिथ्यात्व–श्वेतांवरी दिगंबरी कहलाकर पीतांबर, कृष्णाम्बर धारण करना, मुँहपत्ति कहकर मुँह पर नहीं बाँधना इत्यादि निन्हववत् । १२ जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व–एकेंद्रिय आदि जीवों में हलन चलनादि क्रिया न देखकर उनमें जीव नहीं मानना । १३ अजीव को जीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व-सूखा काष्ठ, पाषाण, मिट्टी, वस्त्र, चित्र इनके जीव के आकार रूप मूर्ति को सजीव मानना । १४ धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व-छः काय के जीवों की रक्षा रूप दयाधर्मको अधर्म मानना । १५ अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व-छः काय के जीवों की हिंसा हो रही हो ऐसे हिंसामय काम को धर्म मानना । १६साधु को असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व–जो पंच महाव्रतों का पालन करनेवाले कनक-कामिनी के त्यागी साधु हैं, उनको असाधु पाखंडी मानना । १७ असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व-कनक-कामिनीधारक भ्रष्टाचारी असाधु को साधु मानना । १८ मोक्ष के मार्ग को संसार

कुइएं, कक्कराइए, छीए, जंभाइए, आमोसे ससरक्खामोसे, आउ-लमाउलाए, सुवणवत्तियाए, †इत्थीविपरियासियाए, दिट्ठीविप-रियासियाए, माणविपरियासियाए पाण-भोयण-विपरियासियाए, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं *।

शब्दार्थ--

इच्छामि पडिक्कमिउं-पाप से निवृत्ति करने के लिए मैं इच्छा करता हूँ। पगामसिज्जाए-मर्यादितकालसे अधिक निद्रा लेनें से। निगामसिज्जाए-मर्यादा से अधिक लम्बा, चौड़ा, जाड़ विछौना करने से। संथारा उवट्टणाए-शय्या के ऊपर सोते हुए विना प्रमा-र्जन किये करवट वदलने से। परियट्टणाए-उक्त प्रकार से वार वार करवट फिराने से। आउट्टणाए-प्रमार्जन किये विना हाथ पैर आदि शरीर के अवयव संकुचित करने से। पसारणाए-प्रमार्जन किये विना हाथ पाँव आदि फैलाने से। छप्पइ संघट्टणाए-यूका आदि जीवों को दवाने से। कुइए-कुचेष्टा करने से अर्थात् स्त्री आदिक के भोग की इच्छा से मन-माना वोलने से। कक्कइए-खुले मुँह से (यत्ना रहित) वोलने से। छीए-खुले मुँहसे छींक लेने से। जंभाइए-खुले मुँहसे उवासी लेनें से। आमोसे-प्रमार्जन किये (पूंजे) विना शरीर खुजलाने से। ससरक्खामोसे-सचित्त रज-मिट्टी आदि से भरे हुए वस्त्रादिका का स्पर्श करने से। आउलमाउलाए-चित्त आकुल व्याकुल होने से। सुवणवत्तियाए-स्वप्न में किसी तरह की वृत्ति होने से। इत्थीविपरियासियाए-स्वप्न में स्त्री-पुरुष के साथ सम्बन्ध

† इत्थी के स्थान पर पुरिसविपरियासियाए ऐसा वाइयों को कहना चाहिये।
* निद्रा से जागृत होंने पर ४ लोगस्स तथा पहिला श्रमण सूत्र अर्थात् निद्रा-दोप निवृत्ति का पाठ कहना चाहिये।

करने की इच्छा होने से। दिट्ठिविपरियासियाए-स्वप्न में दृष्टि का, बुद्धि का विपर्यास होने से। मणविपरियासियाए-स्वप्न में मन का विपर्यास होने से। पाणभोयणविपरियासियाए-स्वप्न में आहार पानी करने से, जो-ऊपर जितने बोल कहे हैं, उनमें से जो कुछ। मे-मैंने। देवसिओ-दिवस-सम्बन्धी। अइयारो-अतिचार (पापं)। कओ-किया हो। तस्स मिच्छामि दुक्कडं-वह मेरा पाप निष्फल हो।

भिक्षा-दोष निवृत्ति का पाठ

पडिक्कमामि गोयरग्गचरियाए, भिक्खायरियाए, उग्घाडक-वाडउग्घाडणाए, साणा वच्छा दारया संघट्टयाए, मंडिपाहुडियाए, बलिपाहुडियाए, ठवणा-पाहुडियाए, संकिए, सहस्सागारे, अणेसणाए, पाणेसणाए, अण्णभोयणाए, पाणभोयणाए, बीयभोयणाए हरिभोयणाए पच्छाकम्मियाए, पुरेकम्मियाए अदिट्ठहडाए, दगसंसट्ठहडाए, रयसंसट्ठहडाए, परिसाडणियाए, परिठावणियाए, ओहोसणभिक्खाए, जं उग्गमेणं, उप्पायणेसणाए, अपडिसुद्धं, पडिग्गहियं परिभुत्तं वा, जं न परिट्ठवियं, तस्स मिच्छामि दुक्कडं। §

शब्दार्थ

पडिक्कमामि-पाप से निवृत्त होता हूँ। गोयरग्गचरियाए-गौ (गाय) की तरह अग्रभाग रूप आहार पानी लेने को गोचरी कहते हैं, उसमें लगे हुये दोषोंसे। भिक्खायरियाए-आहार पानी की सदोष भिक्षा लेने से। (उसमें जो अतिचार लगते हैं, वे कहते हैं)

---

§ गोचरी पोसा अर्थात् दया (छः काय व्रत) के रोज गोचरी मे आहार लाने के बाद इरियावहियं तथा श्रमणसूत्र अर्थात्-भिक्षा.दोष निवृत्ति के पाठ का कायोत्सर्ग करे।

शब्दार्थ

उग्घाड-कवाड-उग्घाडणाए-आधा खुला हुआ किवाड पूरा उघडने से। साणा-श्वान, वच्छा-बछडा, दारया-छोटे बालक-बालिका। संघट्टणाए-संघट्टन करने से, धक्का लगाने से। मंडिपाहुडियाए-किसी दूसरे व्यक्ति के लिये तैयार की हुई किसी वस्तु के अग्रभाग को ग्रहण करने से। वलिपाहुडियाए-बलिदान की सामग्री के लिए किये हुये बाकले (नैवेद्य) को लेने से। ठवणापाहुडियाए-भिक्षुकादिक के निमित्त से जो रक्खा है, उसको लेने से। संकिए-शंका-युक्त (अकल्पनीय) हो, वह लेने से। सहस्सागारे-बलत्कार करने पर लेने से तथा निर्बल से छीन कर लेने से। अणेसणाए-अकल्पनीय आहार एषणा-चोकसी किये बिना लेने से। पाणेसणाए-चोकसी विना पानी लेने से। अण्णभोयणाए-सदोष आहार सेवन करने से। पाण-भोयणाए-दोप युक्त पानी का सेवन करनेसे अथवा द्वीन्द्रियादिकगर्भित तथा सडा हुआ, बिगडा हुआ, जिसका काल परिपूर्ण हो गया हो, ऐसे आहार पानी को लेने से। बीय भोयणाए-बीज सहित (सचित धान्य) का भोजन लेने से। हरियभोयणाए-वनस्पति सहित भोजन लेने से। पच्छाकम्मियाए-पश्चात्कर्म आहारदान करने के पश्चात् कोई दोष लगाने से। पुरेकम्मियाए-पुरा कर्म, आहार लेने से पहले कुछ दोष लगाने से। अदिट्ठहडाए-जहाँ पर दृष्टि पहुँच नहीं सकती, अथवा अन्धकार में से दूर से लाकर दें। उसको ग्रहण करने से। दगसंसट्ठहडाए-सचित्त पानी से हाथ, बर्तन स्पर्श करके दिये हुए आहार को लेने से। रयसंसट्ठहडाए-सचित्त पृथ्वीकाय से तथा रज से स्पर्श हुई वस्तु लेने से। परिसाडणियाए-दान देते समय गिराते२लाकर आहार

दिया हो उसको लेने से। परिठावणियाए—आहार बहुत लाकर परठा देने से तथा कम खाना और बहुत फेंकना पडे ऐसी वस्तु लेने से। ओहोसणभिक्खाए—बिना कारण बार बार वस्तु को माँग माँग कर लेने से। जं उग्गमेणं—दान देने वाले गृहस्थ से जो १६ उद्गमन के दोष लगते हैं उनसे। उप्पायणणेसणाए—दान लेनेवाले साधु से जो १६ उत्पाद के दोष लगते हैं, १० एषणा के दोष साधु और गृहस्थ दोनों मिलकर लगाते हैं उनसे। अपडिसुद्धं-४२ दोषों से दूषित अकल्पनीय आहार पानी। पडिग्गहियं-ग्रहण किया हो। परिभुत्तं वा—अथवा भोजन किया हो। जं न परिट्ठवियं—जो परिष्ठापना करने (परठने-फेंकने) योग्य वस्तु है उसे न परठाया हो। तस्स मिच्छामि दुक्कडं—यह मेरा पाप निष्फल हो।

स्वाध्याय तथा प्रतिलेखना दोष निवृत्ति का पाठ।

पडिक्कमामि चउकालं सज्झायस्स अकरणयाए, उभओ कालं भंडोवगरणस्स अप्पडिलेहणाए, दुप्पडिलेहणाए अप्पमज्जणाए, दुप्पमज्जणाए, अइक्कमे, वइक्कमे, अइयारे, अणायारे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थ—

पडिक्कमामि-पाप से निवृत्त होता हूँ। चउकालं-दिवस और रात्रि के प्रथम और अन्तिम प्रहर में। सज्झायस्स—शास्त्र का स्वाध्याय। अकरणयाए—नहीं किया हो। उभओकालं—दो वक्त अर्थात् दिन के पहिले और अन्तिम प्रहर में। भंडोवगरणस्स-भंड-पात्रादि, उपकरण रजोहरण वस्त्रादिक का। अप्पडिलेहणाए-प्रतिलेखन नहीं किया हो। दुप्पडिलेहणाए-खराब रीति से अर्थात् शास्त्र मर्यादा के अनुसार नहीं देखा हो। अप्पमज्जणाए-देखते हुए जीवा-

दिक की शंका प्राप्त हुई वह जीव हाथ से ग्रहण करने लायक नहीं था, तव गुच्छक-रजोहरण से उसका प्रमार्जन नहीं किया हो। दुप्पमज्जणाए-खराव रीति से प्रमार्जन किया हो। अइक्कमे-अतिक्रम (पाप करने का विचार) किया हो। वइक्कमे-व्यतिक्रम (पाप करने के लिये तैयार) हुआ हो। अइयारे-अतिचार (विपरीत सामग्री मिलाने का पाप) लगा हो। अणायारे-अनाचार (विपरीत कार्य करने का पाप) किया हो। जो-जो। मे-मैंने। देवसिओ-दिवस-सम्बन्धी। अइयारे-अतिचार। कओ-किया हो। तस्स मिच्छामि दुक्कडं-वह मेरा पाप निष्फल हो।

तेतीस बोल का पाठ।

पडिक्कमामि एगविहे असंजमे पडिक्कमामि दोहिं बंधणेहिं, रागबंधणेणं दोसबंधणेणं। पडिक्कमामि तिहिं दंडेहिं मणदंडेणं, वयदंडेणं कायदंडेणं। पडिक्कमामि तिहिं गुत्तिहिं, मणगुत्तिए, वयगुत्तिए, कायगुत्तिए। पडिक्कमामि तिहिं सल्लेहिं, मायासल्लेणं, नियाणसल्लेणं, मिच्छादंसणसल्लेणं। पडिक्कमामि तिहिं गारवेहिं, इड्ढिगारवेणं, रसगारवेणं, सायागारवेणं। पडिक्कमामि तिहिं विराहणाहिं, नाणविराहणाए, दंसण-विराहणाए, चारित्तविराहणाए। पडिक्कमामि चउहिं कसाएहिं, कोहकसाएणं, माणकसाएणं मायाकसाएणं, लोहकसाएणं। पडिक्कमामि चउहिं सण्णाहिं, आहारसण्णाए भयसण्णाए, मेहुणसण्णाए परिग्गहसण्णाए। पडिक्कमामि चउहिं विकहाहिं, इत्थीकहाए, भत्तकहाए, देवकहाएं, रायकहाए। पडिक्कमामि चउहिं झाणेहिं, अट्टेणं झाणेणं, रुद्देणं झाणेणं, धम्मेणं झाणेणं, सुक्केणं झाणेणं। पडिक्कमामि पंचहिं किरियाहिं, काइयाए, अहिगरणियाए पाउसियाए, परितावणियाए, पाणाइवाइयाए।

पडिक्कमामि पंचहिं कामगुणेहिं सद्देणं, रूवेणं, गंधेणं, रसेणं, फासेणं। पडिक्कमामि पंचहिं महव्वएहिं, सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं, सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं। पडिक्कमामि पंचहिं, समिईहिं, इरियासमिए, भासासमिए, एसणासमिए, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए, उच्चारपासवणखेलजल्लसंघाणपरिट्ठावणियासमिए। पडिक्कमामि छहिं जीवनिकाएहिं, पुढवीकाएणं, आउकाएणं, तेउकाएणं, वाउकाएणं, वणस्सइकाएणं, तसकाएणं। पडिक्कमामि छहिं लेसाहिं, किण्हलेसाए, नीललेसाए, काउलेसाए, तेउलेसाए, पउमलेसाए, सुक्कलेसाए। पडिक्कमामि सत्तहिं भयठाणेहिं इहलोगभएणं, परलोगभएणं, आदाणभएणं, अकम्हाभएणं, आजीविकाभयणं, मरणभयणं सिलाघाभयणं। पडिक्कमामि अट्ठहिं मयठाणेहिं, पडिक्कमामि णवहिं, बंभचेर-गुत्तिहिं पडिक्कमामि दसहिं समणधम्मेहिं, एक्कारसहिं उवासगपडिमाहिं, बारसहिं भिक्खुपडिमाहिं, तेरसहिं किरियाठाणेहिं, चउद्दसहिं भूयगामेहिं, पण्णरसहिं परमाहम्मिएहिं, सोलसहिं गाहासोलसयेहिं सत्तरसविहे असंजमेहिं, अट्ठारसविहे अबभेहिं, एगुणवीसाए णायज्झयणेहिं, वीसाए असमाहिठाणेहिं, एगवीसाए सबलेहिं, बावीसाए परिसहेहिं, तेवीसाए सूयगडज्झयणेहिं, चउव्वीसाए देवेहिं, पणवीसाए भावणाहिं, छव्वीसाए दसाकप्पववहाराणं उद्देसण-कालेणं, सत्तावीसाए अणगारगुणेहिं अट्ठावीसाए आयारप्पकप्पेहिं, एगुणतीसाए पावसुयप्पसंगेहिं, तीसाए महामोहणीयठाणेहिं एगतीसाए सिद्धाइगुणेहिं, बत्तीसाए जोगसगहेहिं तेत्तीसाए आसायणाए, अरिहंताणं आसायणाए, सिद्धाणं आसायणाए, आयारियाण

आसायणाएं, उवज्झायाणं आसायणाए, साहूणं आसायणाए, साहूणीणं आसायणाए, सावयाणं आसायणाए, सावियाणं आसायणाए, देवाणं आसायणाए, देवीणं आसायणाए, इहलोगस्स आसायणाए, परलोगस्स आसायणाए, केवलीणं आसायणाए, केवलिपण्णतस्स धम्मस्स आसायणाए, सदेवमणुयासुरस्स-लोगस्स आसायणाए, सव्व-पाण-भूय-जीव-सत्ताणं आसायणाए, कालस्स आसायणाए, सुयस्स आसायणाए, सुयदेवयाए, आसायणाए, वयणायरियस्स आसायणाए, जं वाइद्धं, वच्चामेलियं, हीणक्खरं अच्चक्खरं, पयहीणं, विणयहीणं, जोगहीणं, सुट्ठुदिण्णं, दुट्ठुपडिच्छियं, अकाले कओ सज्झाओ, काले न कओ सज्झाओ, असज्झाए सज्झाइयं सज्झाए न सज्झाइयं, एएसि णं एगाइए तेत्तीसाए ठाणाणं, मज्झे जे जाणियव्वाइं ते णो णाया, जो विप्पजहियव्वाइं, ते णो विप्पजहिया, जे समायरियव्वाइं ते णो समायरिया तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

शब्दार्थ—

पडिक्कमामि-निवृत्त होता हूं । एगविहे-एक प्रकार के । असंजमे-असंयम रूप दोष से । (त्याग) । दोहिं-दो प्रकार के । बंधणेहिं-बंधनों से । रागबंधणेणं-राग (प्रेम) का बन्धन और दोसबन्धणेणं-द्वेप बंधन (त्याग करने योग्य) तिहिं—तीन प्रकार के । दंडेहिं—दंडों से । मणदंडेणं-मन का दंड अर्थात् अशुभ मन करने से वयणदंडेणं-वचन दंड से । कायदंडेणं—कायदंड से । (ये त्याग करने योग्य) । तिहिं-तीन प्रकार की । गुत्तिहिं-गुप्ति के दोषों से । मणगुत्तिए-मन गुप्ति के दोषों से । वयगुत्तिए-वचन गुप्ति के दोषों

से। कायगुत्तिए-काय गुप्ति के दोषों से। (ये स्वीकार करने योग्य)। तिहिं-तीन प्रकार के। सल्लेहिं-शल्य-बाण के समान शल्यों से। मायासल्लेण-कपट रूप शल्य से। नियाणसल्लेणं-तप, जप करणी के फल की वांछा करने रूप शल्य से। मिच्छादंसण-सल्लेणं-खराब धर्म (मत) के श्रद्धा रूप शल्य से। (ये तीनों त्याग करने योग्य)। तिहिं-तीन प्रकार से। गारवेहिं-अहंकारादिक के दोषों से। इड्ढीगारवेणं-ऋद्धि का गर्व करने से। रस-गारवेण मिष्ट भोजन करने का गर्व करने से। सायागारवेणं-शारीरिक, मानसिक सुख सामग्री का गर्व करने से। (ये त्याग करने योग्य। तिहिं-तीन प्रकार से। विराहणाहिं-विराधनाओं से। नाणविराहणाए-पाँच ज्ञान की विराधना करने से। दंसणविराह. णाए—समकित की विराधना करने से। चारित्तविराहणाए—चारित्र की विराधना करने से। (ये त्याग करने योग्य)। चउहिं-चार प्रकार के। कसाएहिं-कषायों से। कोहकसाएणं—क्रोध कषाय करने से। माणकसाएणं-अभिमान कषाय करने से। मायाकसाएण-कपट कषाय करनेसे। लोहकसाएणं—लोभ कषाय करनेसे। (ये त्याग करने योग्य)। चउहिं—चार प्रकारकी। सण्णाहिं-संज्ञाओं-वांछाओंसे। आहारसण्णाए-आहार की इच्छा करनेसे। भयसण्णाए-भीति करने से। मेहुणसण्णाए-मैथुन की इच्छा करने से। परिग्गहसण्णाए—परिग्रह (धन वस्त्रादिक) की ममता करने से। (ये त्याग करने योग्य) चउहिं-चार प्रकार की। विकहाहिं-विकथा-पाप की कथा करने के दोष से। इत्थीकहाए-स्त्री संबंधी (पुरुष संबंधी) अर्थात् उसके रूपादि सम्बन्धी कथा करने से। भत्तकहाए-भोजन की कथा अर्थात् भोजन को अच्छा-बुरा कहने से। देसकहाए-देश के आचार

अर्थात् वेष परिधान की कथा करने से । रायकहाए-राजा सम्बन्धी कथा करने से । (ये त्याग करने योग्य) चउहिं-चार प्रकार के । झाणेहिं-ध्यान के दोपों से । अट्टेण झाणेण-आर्तध्यान अर्थात् विषयादिक का ध्यान करने से । रुद्देण झाणेणं-रुद्रध्यान अर्थात् हिंसादिक का ध्यान करने से । धम्मेणं झाणेणं-धर्मध्यान अर्थात् स्वाध्यायादिक का ध्यान करने से । सुक्केण झाणेणं शुक्ल ध्यान अर्थात् निर्मल अच्छी तरह धर्म संबंधी ध्यान करने से । (आर्तध्यान, रुद्रध्यान त्याग करने योग्य और धर्मध्यान, शुक्लध्यान स्वीकार करने योग्य) पंचहिं-पांच प्रकार की । किरियाहिं-पाप आने के कारणों से । काइयाए-असावधानता से शरीर को कार्य में लगाने से । अहिगरणियाए-हथियारादिक अधिकरण से । पाउसियाए-दूसरे के ऊपर द्वेष रखने से । परितावणियाए-पर जीव को परिताप-दुःख देने से । पाणाइवाइयाए-प्राणी का घात करने से । (ये त्याग करने योग्य) पंचहिं-पांच प्रकार के । कामगुणेहिं-काम-वृद्धि के दोषों से । सद्देणं-विकारी शब्द सुनने से । रूवेण-विकारी रूप देखने से । गंधेणं-अत्तर पुष्पादि सूंघने से । रसेणं-सरस भोजन करने से । फासेणं-स्नान शृंगार रूप स्पर्श करने से । (ये त्याग करने योग्य) । पंचहिं-पांच प्रकार के । महव्वएहिं-महाव्रतों के दोषों से । सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं-सर्वथा जीवहिंसा करने से । सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं-सर्वथा असत्य बोलने से । सव्वाओ-अदिण्णादाणाओ वेरमणं-सर्वथा चोरी करनेसे । सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं-सर्वथा मैथुन सेवन करने से । सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं-सर्वथा परिग्रह रखने से । (ये स्वीकार करने योग्य) पंचहिं-पांच प्रकार की । समिईहिं- समिति के दोषों से । इरियासमिइए-ईर्या समिति के दोष से । भासासमिइए-भाषा समिति के दोष से ।

एसणासमिइए–एषणा समिति के दोष से। आयाणभंडमत्त-निक्खे-
वणासमिइए–वस्त्र, पात्रादिक उठाने और रखने के दोष से-
उच्चार-पासवण-खेल-जल्ल-संघाण-परिठावणियासमिइए-मल, मूत्र,
खंकार, पसीना, नासिका-मल वगैरह के परिठावणा दोष से। (ये
पांच स्वीकार करने योग्य) छहिं-छः प्रकार के। जीवनिकाएहिं–
जीव समूह की विराधना दोष से। पुढवीकाएणं-मिट्टी आदिक के
जीवों की विराधना से। आउकाएणं-पानी आदिकके जीवोंकी विरा-
धनासे। तेउकाएणं-अग्नि आदिक जीवों की विराधना से। वाउकाएणं
वायु काय के जीवों की विराधना से। वणस्सइकाएणं-वनस्पतिकाय के
जीवों की विराधना से। तसकाएण–त्रसकाय के जीवों की विरा-
धना से। (ये जानने योग्य) छहिं-छः प्रकार की। लेसाहिं-लेश्या
के दोषों से। किण्हलेसाए-कृष्ण लेश्या अर्थात् अत्यन्त हिंसादिक
के परिणाम से। नीललेसाए-नील लेश्या अर्थात् अभिमान और
विषयवांछा के परिणाम से। काउलेसाए-कापोत लेश्या अर्थात्
परदारा सेवन के परिणाम से। (ये तीन त्याग करने योग्य) तेउ–
लेसाए तेजो लेश्याके दोष से अर्थात् दया ध्यान आदि धर्म जानकर
भी नहीं करने से। पउमलेसाए-पद्म लेश्या के दोष से अर्थात्
दया, क्षमा सुशीलता आदिक साधु गुणों का सेवन नहीं करने से।
सुक्कलेसाए-शुक्ल लेश्याके दोष से अर्थात् राग-द्वेषरहित वीतराग,
परिणामों को सेवन करने से। सत्तहिं-सात प्रकार के। भयठाणेहिं-
भय के स्थानों से। इहलोगभएणं-इस लोक के भय से अर्थात्
मनुष्य को मनुष्य के भय से। परलोगभएणं-परलोक के भय से
अर्थात् मनुष्य को देवता या तिर्यंच सम्बन्धी भय से। आदाणभ-
एणं–आदान भय से अर्थात् धन-दौलत के नष्ट होने के भय से।

अकम्हाभयेणं–अकस्मात् भय से अर्थात् कहीं से अचिन्तित आपत्ति आ जाने के भय से । आजीविका भयेणं-आजीविका के भय से अर्थात् भविष्यमें खाने-पीनेको मिलेगा या नहीं ? इस भय से । मरणभयेणं-मृत्यु के भय से । सिलाघाभयेणं-यश: कीर्ति के भयसे अर्थात् किसी तरह इज्जत में बाधा न पहुँचे इस भय से । (ये त्याग करने योग्य) अट्ठहिं-आठ प्रकार के । मयठाणेहिं–अभिमान स्थानों से । जाइमयेणं-जातिमद से अर्थात् मातृपक्ष के गर्व से । कुलमयेणं-कुलमद से अर्थात् पितृपक्ष के गर्व से । बलमयेणं–बल के मद से । रूवमयेणं-रूप के मद से । तवमयेणं-तपश्चर्या के गर्व से । लाभमयेणं-लाभ प्राप्ति के गर्व से । सुयमयेणं-सूत्र विद्या के मद से । इस्सरियमएणं-ऐश्वर्य सम्पत्ति के मद से । (ये त्याग करने योग्य) नवहिं-नव प्रकार के । बंभचेरगुत्तिहिं-ब्रह्मचर्य गुप्ति अर्थात् ब्रह्मचर्य पालन नहीं करने के दोषों से । (वे इस प्रकार हैं, जैसे इत्थीपसुपंडगसंसत्ताणि -स्त्री (, पशु की स्त्री,) पुरिस (पुरुष) नपुंसक सहित । सिज्जासणाणि-पीढ आसन स्थानक आदि । सेवित्ता-सेवन करने वाला । णो भवइ-न होवे । इत्थीणं-स्त्री संबंधी (पुरुष संबंधी) कहं–कथा को । कहित्ता-कहने वाला । णो भवइ-न होवे । इत्थीणं-स्त्री के । सद्धि–साथ । सन्निसेज्जागए-एक आसन पर बैठने वाला । णो भवइ-न होवे । इत्थीणं–स्त्री जाति के । इंदियाइं-इन्द्रियों को जो कि, मणोहराइं सुन्दर हैं । मणोरमाइं-मन को लुभानेवाली हैं, उनको । आलोइत्ता-देखनेवाला । निज्झाइत्ता—ध्यान देनेवाला । णो भवइ-न होवे । इत्थीणं-स्त्री का । कुड्डंतरंसि-पाषाणभित्ति के अन्तर से । वा-अथवा । दूसंतरंसि वा–वस्त्र के अन्दर से अर्थात् पडदे से । भित्तंतरंसि वा-मिट्टी की भीत के

अन्दर से । कूइयसद्दं वा-कूजित अर्थात् विषय सेवन करते समय होनेवाले शब्द को । अथवा रुइयसद्दं वा— रोने के शब्द को । अथवा गीयसद्दं वा—गीत शब्द को । अथवा हसिय—सद्दं वा-हास्य-शब्द को । अथवा थणियसद्दं वा-स्नेह उत्पन्न करनेवाले शब्द को । अथवा कंदियसद्दं वा–करुणाजनक शब्द को । विलवियसद्दं वा-विलाप शब्द को । सुणेत्ता-सुननेवाला । णो भवइ-न होवे । इत्थीणं-स्त्री का । पुव्वरयं-पहले के विषय विलास का । पुव्वकीलियं-पहले की हुई क्रीडा का । अणुसरित्ता-याद करनेवाला । णो भवइ-न होवे । पणीयं-अति सरस । आहारं-आहार का । आहारित्ता-खानेवाला । णो भवइ-न होवे । अतिमायाए–मर्यादा से अधिक । पाणभोयणं-जल और आहार का । आहारित्ता-खानेवाला । णो भवइ-न होवे । विभूसाणुवादी स्नानादिक शृंगार करनेवाला । णो भवइ-न होवे । (ये स्वीकार करने योग्य) दसहिं-दस प्रकार के । समणधम्मेहिं-श्रमण धर्म को नहीं पालन करने के दोषों से । (वे दशविध श्रमण धर्म इस प्रकार हैं । खन्ती–क्षमा रखना । मुत्ती-लोभ रहित होना । अज्जवे-सरलता रखना । मद्दवे-अहंकार का त्याग करना । लाघवे-भंडोपकरण की उपाधि से लघु होना । सच्चे-प्रामाणिकता से । संजमे-मन और इन्द्रियों को काबू में रखना । तवे-आत्मशक्ति बढाने के लिए उपवास वगैरह तप करना । चेइए-ज्ञानाभ्यास करना । बम्भचेरवासे-ब्रह्मचर्य का पालन करना । (ये स्वीकार करने योग्य) एक्कारसहिं-ग्यारह प्रकार की । उवासगपडिमाहिं–श्रावक की प्रतिमा–अभिग्रह विशेष में लगे हुये दोषों से । (वे ग्यारह पडिमाएँ इस प्रकार हैं-१ दर्शन प्रतिमा–निर्मल सम्यक्त्व पालन । २ व्रतप्रतिमा-व्रतों में अतिचार नहीं लगाना ।

३ सामायिक प्रतिमा-त्रिकाल में शुद्ध अर्थात् ३२ दोष और पांच अतिचार रहित सामायिक करना। ४ पौषध प्रतिमा-महीने में, २ अष्टमी, २चतुर्दशी, अमावास्या और पूर्णिमा के रोज शुद्ध अर्थात् १८ और पाँच अतिचार रहित पौषध करना। ५ नियम प्रतिमा-नियम पाँच प्रकार के है जैसे १ स्नान नहीं करना, २ रात्रि भोजन नहीं करना, तथा अप्रकाशित मकान में भोजन नही करना, ३ धोती की काछ (लांग) नहीं लगाना, ४ दिन में ब्रह्मचर्य पालन करना, ५ रात्रि में ब्रह्मचर्य की मर्यादा करना। ६ ब्रह्मचर्य प्रतिमा-छः मास तक ब्रह्मचर्य का पालन करना। ७ सचित्तत्याग प्रतिमा-सात मास तक सचित पदार्थों का आहार नहीं करना। ८ अनारम्भ प्रतिमा-आरम्भ अर्थात् पाप लगे ऐसा कर्त्तव्य आठ मास तक स्वयं नहीं करना। ९ प्रेष्यारम्भ प्रतिमा-नौ मास तक दास-दासी वगैरह से आरम्भ न करवाना। १० उद्दिष्टकृत प्रतिमा-अपने लिए बनाए हुए आहार पानी को दस मास तक नहीं लेना। ११ श्रमणभूत प्रतिमा-साधु के समान वेष धारण करके साधु की सब क्रियाएँ ग्यारह मास तक पालन करना। साधु समझकर कोई नमस्कार करे तो कह दे कि मैं श्रावक हूँ। इस तरह पहली प्रतिमा १ मास की, दूसरी प्रतिमा २मास की यावत् ग्यारहवीं प्रतिमा ग्यारहमास की, यों साढे पाँच वर्ष में यह तप पूर्ण होता है। (ये स्वीकार करने योग्य) बारसहिं-बारह प्रकार की। भिक्खुपडिमाहिं-साधु की प्रतिमा† अर्थात् अभिग्रह विशेष में लगे हुये दोषों से। (साधुओं की बारह प्रतिज्ञाएं इस प्रकार हैं-१ साधु को दान देते समय पात्र में एक

†पहली प्रतिमा १ मास की, दूसरी प्रतिमा २ मास की यावत् सातवीं प्रतिमा ७ मास की ८ वीं, ९ वी, १० वीं सात अहोरात्रि की, ११ वीं १ दिन रात्रि की, १२ वीं, एक रात्रि की–दशाश्रुतस्कन्ध ७ वीं दशा।

वक्त में जितनी वस्तु पडे उसे आहार की एक 'दाति' कहते हैं उसी तरह पानी की धार खण्डित न हो वहां तक उसे भी पानी की एक 'दाति' कहते हैं। यों पहली प्रतिमा में एक महीने तक एक 'दाति' आहार की और एक 'दाति' पानी की ग्रहण करे। दूसरी प्रतिमा मे एक महीने तक दो 'दाति' आहार की और दो 'दाति' पानी की ग्रहण करे। इसी तरह तीसरी में एक महीने तक तीन 'दाति' आहार और पानी की, चोथी प्रतिमा में एक महीने तक चार-चार 'दाति' आहार और पानी की, यावत् सातवीं प्रतिमा में एक महीने तक सात 'दाति' आहार की सात 'दाति' पानी की ग्रहण करे। आठवीं प्रतिमा में सात दिन चौविहार (चारों आहार का त्याग) एकान्तर उपवास करे। दिन में सूर्य के ताप में रह कर आतापना ले, रात्रि में वस्त्र-रहित रहे, एक आसन से बैठा रहे, या एक करवट से सोता रहे या खड़ा रहे अर्थात् तीनों में से एक आसन से सब रात्रि वितावे। नवमी प्रतिमा में भी सात दिन तक एकान्तर उपवास करे, दिन में सूर्य के ताप में रहे, रात्रि में वस्त्ररहित रहे, और पद्मासन[1], दण्डासन[2], लगडासन[3], करे। दसवीं प्रतिमा में भी सात दिन तक चौविहार एकान्तर उपवास करे। दिन में सूर्य के ताप में रहे, रात्रि में वस्त्ररहित रहे और वीरासन[4], गोदुहासन[5], अम्बखुजासन इन आसनों में से

१–दाहिने पैर की जंघा पर वाम पैर, और वाम पैर की जंघा पर दाहिना पैर चढाकर बैठने को 'पद्मासन' कहते हैं। २–दोनों हाथ ऊंचा करके खड़ा रहने को 'दण्डासन' कहते हैं। ३–शिर और पाव की एडी जमीन पर लगाकर शरीर को कमान के समान रखने को 'लगडासन' कहते हैं।

४–वाम (बाया) घुटना मरोड़कर और दक्षिण (दाहिना) घुटना खड़ा करके बैठना उसको 'वीरासन' कहते हैं। ५–गाय का दूध निकालते समय जिस तरह बैठते है, उसका नाम 'गोदुहासन' हैं।

किसी एक आसन से सब रात्रि वितावे। ग्यारहवीं प्रतिमा में छट्ठमभत्त अर्थात् वेला करे, वेले के दिन ८ प्रहर तक कायोत्सर्ग करके खड़ा रहे। बारहवीं प्रतिमा में अट्ठमभत्त तेला करे। तेले के दिन भयंकर स्मशान में ८ प्रहर तक कायोत्सर्ग करे। एक पुद्-गल पर दृष्टि स्थिर करे, देव-दानव सम्बन्धी परीषह होने पर चलायमान हो जावे तो उन्माद अर्थात् पागलपन या दीर्घकाल का रोग प्राप्त होता है और केवली प्रणीत धर्म से भ्रष्ट होता है। जो स्थिर रहकर समभाव से परीषह सह ले तो अवधिज्ञान, मनः पर्यायज्ञान, केवलज्ञान, (इन तीनों में से किसी एक ज्ञान की प्राप्ति होती है)। तेरसहि-तेरह प्रकार के। किरियाठाणेहि-पाप क्रिया-कर्म बान्धने के स्थानों से। (वे तेरह क्रियाएं इस प्रकार हैं—अट्ठादण्डे-खास जरूर कार्य के लिए आरंभ करना। २ अणट्ठा-दण्डे—विना काम अर्थात् निरर्थक आरंभ करना। ३ हिंसादण्डे-यह मुझे मारेगा इसबुद्धि से किसी को मारना। ४ अकम्हादण्डे—अकस्मात् दण्ड जैसे हरिण को बाण मारते समय मनुष्य का घात हो जाना। ५ दिट्ठिविपरीयासदण्डे-दृष्टिविपर्यास अर्थात् शत्रु को मित्र और मित्र को शत्रु मानना। ६ मुसावाइए-मृषावादी झूठ बोलना। ७ अदिण्णादाणवत्तिए-विना दी हुई वस्तु को लेना, चोरी करना। ८ अज्झत्थवत्तिए-आध्यात्मिकवृत्ति अर्थात् आत्मा और मन को कलुषित करनेवाला आर्त्त, रौद्रध्यान करना। ९ माणवत्तिए—मानवृत्तिक अर्थात् अहंकार करना। १० मित्तदोसवत्तिये—मित्र दोषवृत्तिक अर्थात् सगे सम्बन्धियों को छोटे अपराध पर बड़ा दण्ड देना। ११ मायवत्तिये-माया कपट करना। १२ लोभवत्तिये-लोभ करना। १३ इरियावहिये-अयत्ना से रास्ते में

चलना। (ये त्याग करने योग्य) चउद्दसहि—चौदह प्रकार के। भूयगामेहि भूतग्रामों से अर्थात् चौदह प्रकार के जीवों की विराधना से लगे हुये दोषों से। (वे जीव इस प्रकार हैं। सूक्ष्म एकेन्द्रिय—जो जीव सर्व लोकव्यापी होकर भी दृष्टि में न आवे। २ बादर एकेन्द्रिय—पृथ्वी आदिक पाँचों स्थावर जो देखने में आते हैं। द्वीन्द्रिय-दो इन्द्रिय वाले जीव। ४ त्रीन्द्रिय-तीन इन्द्रिय वाले जीव। ५ चतुरिन्द्रिय-चार इन्द्रिय वाले जीव। ६ असंज्ञी पंचेंन्द्रिय-जो जीव माता पिताके संयोग बिना उत्पन्न होते हैं ऐसे सम्मूर्च्छिम। ७ संज्ञी पंचेन्द्रिय-माता पिता के संयोग से, तथा नरक में, और देवताओं की शय्या में जीव उत्पन्न होते हैं। इन सातों के अपर्याप्त और पर्याप्त इन दो भेदों से जीव के चौदह प्रकार होते हैं) (ये जानने योग्य) पण्णरसहिं-पन्द्रह प्रकार के। परमाहम्मिएहिं-परम अधार्मिको से। वे इस प्रकार हैं-१ अम्बे-नारकियों को मसलकर आम्रफल के समान बना देते हैं। २ अम्बरसे-आम का रस जिस तरह निकाला जाता है उसी तरह नारकियों का रक्त, मांस हड्डी अलग-अलग कर देते हैं। ३ सामे-श्याम वर्ण वाले और कोतवाल जिस तरह चोर को सजा

---

* जीव उत्पन्न होते ही आहार ग्रहण करता है वह आहार पर्याप्ति आहार से शरीर बनता वह शरीर पर्याप्ति, शरीर पर इन्द्रियों की आकृति की सत्ता होवे वह इन्द्रिय पर्याप्ति, इन्द्रियों के छिद्रों मे वायु गमना-गमन की सत्ता होवे वह श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, भाषा बोलने की सत्ता होवे वह भाषा पर्याप्ति, और विचार करने की सत्ता होवे वह मनः पर्याप्ति, इन छ:पर्याप्तियों में से जिस जीव में जितनी पर्याप्तियाँ मिलती हों उसमें से, कमी पर्याप्ति बंधन करे वह 'अपर्याप्त', और पूरी पर्याप्ति बाव वह 'पर्याप्त' कहलाते है।

देते हैं उसी तरह नारकियों को दुःख देते हैं। ४ सबले-चित्र-विचित्र वर्ण वाले और देवी के सामने बकरे का बलिदान जिस प्रकार करते हैं उस प्रकार नारकियों को मारते चीरते हैं। ५रुद्दे-भयंकर रूप वाले और कसाई जिस तरह जीवों को मारते हैं उसी तरह नारकियों को मारते हैं। ६ महारुद्दे-महा भयंकर और सिंह, कुत्ता, बिल्ली अपने भक्ष्य को जिस तरह चीरते फाड़ते हैं, उसी तरह ये नारकियों को सताते हैं। ७काले-काल,हलवाई जिस तरह कढ़ाई में पदार्थ को तलता है, उसी तरह ये नारकियों को तलते हैं। ८ महाकाले-महाकाल, बाज, चील आदि हिंसक पक्षी के रूप बनाकर नारकियों को नोंचते हैं। ९असिपत्ते-असिपत्र, वीर क्षत्रिय जिसतरह सेना को काटते हैं उसी तरह नारकियों को काटते हैं।१० धणुये-शिकारी की तरह धनुष्य-बाण से नारक जीवों को भेदते हैं। ११ कुंभिये-कुंभ घडे में नारकियों को ठोस ठोस कर मारते हैं। १२ वालुये-भडभुंजे की तरह नारक जीवों को भाड़ में भूंजते हैं। १३ वेतरणी-वेतरणी नदी के अत्युष्ण और वेगवती जल धारा में नारकियों को डालते हैं। १४ खरस्सरे-शाल्मली वृक्ष के नीचे नारक जीवों को बैठाकर हवा चलाते हैं। तब उस वृक्ष के पत्ते तलवार के समान नारकियों अंगोंपांगों को काटते हैं। १५ महाघोसे-कसाई जिस तरह बकरियों को ठोस-ठोस के बाडे में भरता है, उसी तरह नारकियों को ये कोठे में भरते हैं। (ये जानने योग्य) सोलसहिं-सोलह प्रकार के। * गाहासोलसयेहिं-

* श्री सूयगडांग सूत्र के १६ अध्ययन इस प्रकार हैं- स्वसमय परसमय, २ वैतालीय, ३ उपसर्ग परिज्ञा, ४ स्त्री परिज्ञा, ५ नर्क विभुक्ति ६ वीर स्तुति, ७ कुशीलपरिभाषा, ८ वीर्य, धर्म, १० समाधि, मोक्षमार्ग, १२ समवशरण, १३ यथातथ्य, १४ ग्रन्थ, १५ आदानीय और १६ गाथा।

श्री सूयगडांग मूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध के सोलहवें अध्ययन का नाम जिसमे गाथा रूप से श्रमण-माहण, भिक्खु व निर्ग्रन्थ शब्दों के लक्षणों का विवेचन किया है, उस गाथा के विरुद्धाचरण से लगे हुये दोपों से। सत्तरसविहे असंजमेहिं–सत्रह प्रकार के असंयमों से। वे इस प्रकार हैं। १ पृथ्वी, २ पानी, ३ अग्नि, ४ वायु, ५ वनस्पति, ६ द्वीन्द्रिय, ७ त्रीन्द्रिय, ८ चतुरिन्द्रिय, ९ पंचेन्द्रिय इन जीवों की हिंसा करे वह असंयम १० अजीवकाय-वस्त्र, पात्र, पुस्तक अयत्नापूर्वक कार्य में लावे, ११ प्रेक्षा-विन देखे जमीनपर चलना और वैठना। १२ उपेक्षा-संयमियों की सहायता न करना और शुभ योगकी प्रवृति तथा अशुभ योग की निवृत्ति में वेपरवाह रहना। १३ अप्रमार्जन-अप्रकाशित स्थल पर प्रमार्जन किये विना चलना, पात्र आदि उपकरणों को विना प्रमार्जन किए काम में लाना, १४ परिष्ठापना–लघु नीत, वडी नीत को अयत्ना से परिष्ठापन करना, १५ मन, १६ वचन, १७ काया को विपरीत मार्ग से प्रवृत्ति में लाना। (ये त्याग करने योग्य) अट्ठारसविहे अवम्भेहिं–अठारह प्रकार के अब्रह्मचर्य से, वे इस प्रकार हैं–औदारिक शरीर सम्वन्धी मैथुन १ मन, २ वचन, ३ काया से सेवन करे, ४ मन, ५ वचन, ६ काया से सेवन करने वाले को भला जाने, ये ९ भेद औदारिक शरीर के, ऐसे ही ९ भेद वैक्रिय शरीर के इस तरह १८ अब्रह्मचर्य हैं। (ये त्याग करने योग्य) एगुणवीसाए णायज्झयणेहिं-श्री ज्ञाताधर्म कथा सूत्र के १९ अध्ययनों में प्रतिपादित कथानकों से ग्रहण करने योग्य वातों को न ग्रहण करने रूप दोपों से। वे १९ अध्ययन इस प्रकार हैं–१ मेघकुमार का, २ धन्नासार्थवाह और विजय

चोर का, ३ मयूर के अंडों का, ४ कूर्म का, ५ थावर्चापुत्र और शैलक राजर्षि का, ६ तुम्बी का, ७ रोहिणी का, ८ मल्लिनाथजी का, ९ जिनरक्षित जिनपाल का, १० चन्द्रमा का, ११ दावानल (दवदवा वृक्ष) का, १२ सुवृद्धि प्रधान का, १३ नन्दनमणिहार का, १४ पोटालिका का, १५ नन्दीफल का, १६ द्रौपदी का, १७ अकीर्ण देश के घोडे का, १८ सुसमा दारिका का, १९ पुण्डरिक कुण्डरिक का। (ये जानने योग्य) वीसाये असमाहि ठाणेहिं- वीस प्रकार के असमाधि दोषों से। जैसे असमाधि (वीमारी) से शरीर निर्बल हो जाता है उसी तरह ये २० असमाधि दोष संयम को निर्बल कर देते हैं। वे इस प्रकार हैं—१ जल्दी–जल्दी चले, २ विना प्रमार्जन किये चले, ३ अयोग्य रीति से प्रमार्जन करे, ४ पाट-पाटला ज्यादा रक्खे, ५ वडों के सन्मुख वोले अर्थात् मुँह-जोरी करे, ६ वृद्ध–स्थविर का घातचिन्तन करे, ७ सव जीवों के घात की इच्छा करे, ८ सदैव क्रोधी तथा संतप्त वना रहे, ९ पीछे परोक्ष में दूसरों की निन्दा करें, १० वारम्वार दूसरों के दुर्गुणों की उदीरणा करें, ११ नये-नये क्लेश झगडों को, जो कि पहले उत्पन्न न हुए हों उन्हें उत्पन्न करे, १२ उपशान्त क्लेश पुनः प्रकट करे, १३ अकाल में स्वाध्याय करे, १४ सचित्त पदार्थ से स्पर्श किये हुए गृहस्थों के हथों से आहार पानी लेवे, १६ साधु संघ में भेद-भाव डाले, १७ झुंझलाकर वोले, १८ परस्पर में झगडा करे, १९ सूर्योदय से सूर्यास्त तक खाता ही रहे, २० अकल्पनीय आहार सेवन करे,। (ये त्याग करने योग्य) एगवीसाए संवलेहिं- इक्कीस प्रकर के सवल दोषों से—जैसे निर्वल मनुष्य पर सवल (भारी) वजन पड़ने से उसका घात होता है, वैसे ही इक्कीस

प्रकार के सबल-दोष सेवन करने से-संयम का घात होता है। वे इस प्रकार हैं-१ हस्तकर्म करें, २ मैथुन सेवें, ३ रात्रि भोजन करें ४ आधाकर्मी आहार का सेवन करें, ५ राजपिंड–बलिष्ठ आहार का सेवन करें, ६ छीनकर, उधार लेकर, निर्बल से छीनकर, मालिक की आज्ञा बिना लेकर दिये हुये आहार का सेवन करें, ७ वारम्बार व्रत प्रत्याख्यान को भंग करके आहार का सेवन करें, ८ दीक्षा लेने के बाद छः महीने के अन्दर सम्प्रदाय का परिवर्तन करें ९ एक महीने के अन्दर तीन वक्त जलयुक्त नदी-नाले में पाँव देकर उतरें, १० एक महीने में तीन वक्त दगाबाजी करें, ११ जिसकी आज्ञा लेकर मकान में उतरे हों, उसके घर का आहार-पानी सेवन करें, १२ जान–बूझकर जीवों का घात करें, १३ जान बूझकर झूठ बोलें, १४ जान-बूझकर चोरी करें, १५ जान-बूझकर सचित पृथ्वी पर बैठें, सोवें, स्वाध्यायादिक करें, १६ इसी तरह गिली जमिन पर सोवे, बैठे, स्वाध्याय करें, १७ इसी तरह जान-बूझकर सचित्त शिलापर, सचित कंकरों पर, जीवों से भरे हुए काष्ठ पाट-पाटलों पर, अण्डा, बीज, वनस्पति, ओसबिंदु, कीडीनगर, फूलन, पानी आदि सचित स्थानों पर बैठें, सोवें, स्वाध्याय करें, १८ जान बूझकर मूल, कन्द, स्कन्द, त्वचा, प्रवाल, (कंकुर) पत्ता फूल, फल, बीज, हरित आदि सचित पदार्थों का भोजन करें, १९ एक वर्ष के अन्दर दस बार पानी का लेप अर्थात् नदी-नाले में पाँव देकर उतरें २० एक वर्ष के अन्दर दस बार दगा बाजी करें २१ जान-बूझकर सचित्त पानी या सचित्त रज से लगे हुए हाथ पांव कुड़छी वर्तन आदि से दिये हुए आहार को ग्रहण करके भोजन करें (ये त्याग करने योग्य हैं)

बावीसाएं परिसहेंहिं—वाईस परीषहों को सहन नहीं करने रूप दोषों से। वे परीषह इस प्रकार हैं। १ क्षुधा २ तृषा ३ शीत, ४ उष्ण, ५ दंशमशक, ६ अचेल, ७ अरति, ८ स्त्री, ९ चर्या (गति) १० निषद्या (स्थिर आसन से बैठना) ११ शय्या १२ आक्रोशवचन, १३ वध, १४ याचना, १५ अलाभ १६ रोग, १७ तृणस्पर्श, १८ जल-मैल (पसीना) १९ सत्कार २० प्रज्ञा, २१ अज्ञान, २२ दर्शन, (सम्यक्त्व) ये जानकर जीतने योग्य हैं) तेवीसाए सूयगडज्झयणेंहिं—सूयगडांग सूत्र के २३ अध्ययनों में प्रतिपादित उपादेय विषयों के अग्रहण रूप दोषो से। वे अध्ययन इस प्रकार हैं। प्रथम श्रुतस्कंध में १६ अध्ययन सोलहवें बोल में के और दूसरे श्रुतस्कंध में ७ अध्ययन हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—१ पुण्डरीक, २ क्रियास्थान, ३ आहार प्रतिज्ञा ४ प्रत्यख्यान क्रिया, ५ अनाचार श्रुत, ६ आर्द्रकोपाख्यान, ७ उदक पेढालपुत्र, ये सब २३ हुये। (ये जानने योग्य हैं) चउव्वीसाए देवेंहिं—चौवीस प्रकार के देवों के विषय में कुशंकादि दोषों से। वे इस प्रकार हैं २४ तीर्थङ्कर तथा १ असुरकुमार, २ नागकुमार, ३ सुवर्णकुमार, ४ विद्युत्कुमार, ५ अग्निकुमार, ६ द्वीपकुमार, ७ उदधिकुमार. ८ दिशाकुमार, ९ पवनकुमार, १० स्तनितकुमार, (ये दश भवनपति देव) ११ पिशाच, १२ भूत, १३ यक्ष, १४ राक्षस, १५ किन्नर, १६ किंपुरुष १७ महोरग, १८ गंधर्व, (ये आठ व्यन्तर देव) १९ चन्द्र, २० सूर्य, २१ ग्रह, २२ नक्षत्र, २३ तारा, (ये पांच ज्योतिषी देव,) और २४ वैमानिक देव, (ये जानने योग्य) पणवीसाए भावणाहिं—पांच महव्रतों के पच्चीस प्रकार की भावना सम्बन्धी दोषों से। वे भावनाएँ इस

प्रकार हैं–पहले महाव्रत की पांच भावनाएँ–१ ईर्या, २ मन, ३ भाषा, ४ एषणा, ५ आदान निक्षेपणा। दूसरे महाव्रत की पांच भावनाएँ–१ विचारकर बोलना, २ क्रोधवश झूठ नहीं बोलना, क्रोध आवे तो क्षमा करना, ३ लोभवश झूठ नहीं बोलना, लोभ आवे तो संतोप रखना ४ भयवश झूठ नहीं बोलना, भय आवे तो धैर्य रखना ५ हास्यवश झूठ नहीं बोलना, हास्य आवे तो मौन रखना। तीसरे महाव्रत की पाँच भावनाएँ–१ निर्दोष स्थान में मालिक अथवा उसके नौकर की आज्ञा लेकर ठहरना, २ सचित वस्तु तृण कंकरादि को भी आज्ञा लेकर कार्य में लाना, ३ छः काय का आरम्भ करके स्थानक सेवन नहीं करना, ४ देव, गुरु, इन्द्र, राजा, शय्यातर, गाथापति, स्वधर्मी का अदत्त नहीं लेना, ५ गुरु, ग्लान, रोगी, तपस्वी, नवदीक्षित का विनय करना तथा वैयावृत्य करना चौथे महाव्रत की पाँच भावनाएँ- १ स्त्री, पशु, नपुंसक के निवासवाले स्थानक में नहीं उतरना, २ स्त्री-सम्बधी कथा वार्ता नहीं करना ३ स्त्री के अंगोपांग रागदृष्टि से नहीं देखना, ४ पूर्वभुक्त विषयों को स्मरण नहीं करना, ५ प्रतिदिन सरस आहार नहीं करना पाँचवें महाव्रत की पाँच भावनाएँ--१ भले शब्दों पर राग बुरे शब्दों पर द्वेष नहीं करना, २ रूप, ३ गंध, ४ रस ५ स्पर्श इनके भले बुरे पर राग-द्वेष नहीं करना। (ये स्वीकार करने योग्य) छव्वीसाए दसकप्पववहाराणं उद्देसणकालेणं- दशाश्रुतस्कंध, बृहत्कल्प, व्यवहार सूत्रों के २६ अध्ययनों में प्रति- पादित साधु के आचार में लगे हुए दोषों से। वे इस प्रकार हैं– दशाश्रुतस्कंध सूत्र के १० अध्ययन, वृहत्कल्प के ६ अध्ययन, व्यवहार सूत्र के १० अध्ययन ये सब मिलकर २६ अध्ययन हैं

सत्तावीसाए अणगार गुणेहिं—सत्ताईस प्रकार के साधुगुणों में लगे हुए दोषों से। वे गुण इस प्रकार हैं ५ महाव्रत पालना, ५ इन्द्रिय जीतना, ४ कषाय हटाना इस तरह १४ हुए, १५ भाव सत्य, १६ करणसत्य, १७ योगसत्य, १८ क्षमावान् होना, १९ वैराग्यवान् होना, २० मनसमाधि रखना, २१ वचन-समाधि रखना, २२ काय-समाधि रखना २३ ज्ञान संपन्न होना, २४ दर्शन संपन्न होना, २५ चारित्र संपन्न होना, २६ वेदना को समभाव से सहना, २७ मारणांतिक कष्ट आने पर भी समभाव रखना। (ये स्वीकार करने योग्य) अट्ठावीसाए आयारपकप्पेहिं—अट्ठाईस प्रकार के साधु के आचारकल्प में लगे हुए दोषों से वे आचार कल्प इन अध्ययनों में वर्णित हैं-१ शस्त्रपरिज्ञा, २ लोकविजय, ३ शीतोष्णीय, ४ समकित, ५ लोकसार, ६ धूताख्य, ७ महाप्रज्ञा, ८ विमोक्ष, ९ उपधान श्रुत (आचारांग सूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध के ये ९ अध्ययन हैं) १० पिंडैषणा, ११ शय्या, १२ ईर्या, १३ भाषा, १४ वस्त्रैषणा, १५ पात्रैषणा, १६ अवग्रह प्रतिमा, १७ क्रिया-स्थान, १८ निषद्या, १९ स्थंडिल, २० शब्द, २१ रूप, २२ पर-क्रिया, २३ परस्पर क्रिया, २४ भावना, २५ विमुक्ति (ये आचारांग सूत्र के दूसरे श्रुतस्कंध के १६ अध्ययन) और १ उपघातिक, २ अनुपघातिक ३ व्रतारोपण (ये तीन अध्ययन निशीथ सूत्र के) इस तरह २८ अध्ययन साधु आचार कल्प के हैं (ये जानने योग्य हैं)

एगूणतीसाए पावसुयप्पसंगेहिं—२९ प्रकार के पाप सूत्रों से। वे इस प्रकार हे। १ भूकम्प—जमीन के हिलने का फल बतलानेवाला शास्त्र, २ उत्पात-व्यंतर देव—कृत उत्पात का फल बतलानेवाला शास्त्र, ३ स्वप्न-स्वप्न फल दर्शन शास्त्र, ४ अन्तरिक्ष-

ज्योतिष ग्रह, नक्षत्रादि के फलदर्शक शास्त्र, ५ अंगस्फुरण-शरीर फड़कने के फलदर्शक शास्त्र, ६ स्वर--पशु--पक्षी वगैरह के बोलने के फ़ल-दर्शक शास्त्र, ७ व्यंजन-तिल-मसा आदि लक्षणों के फल--दर्शक शास्त्र, ८ लक्षण-शरीर की रेखा आदि के फल दर्शक शास्त्र, ये आठ मूलशास्त्र, इन आठों के अर्थ, इन आठों की वृत्ति (कथा) ८×३=२४ हुए। २५ कामशास्त्र २६ गीत--नृत्य शास्त्र २७ मन्त्रशास्त्र--वशीकरणादि २८ योगशास्त्र--हठयोगादि २९ अन्य तीर्थियों के आचारशास्त्र (ये त्याग करने योग्य) तीसाए महामोहणीयठाणेहिं-तीस प्रकार के महामोहनीय स्थानों से। उत्कृष्ट ७० कोडाकोड़ सागरोपम पर्यंत सम्यक्त्व की प्राप्ति न होने देनेवाला महामोहनीय कर्म का बन्ध ३० प्रकारसे जीव करते हैं। वे इस प्रकार हैं-१ त्रसजीवको पानी में डुबाकर मारे २ त्रसजीव के श्वासोच्छ्वास को रोककर मारे, ३ त्रसजीवको धुवाँ करके मारे,४ मस्तक पर मुद्गल आदिका घाव करके मारे ५ गीला चमडा मस्तक पर बाँध कर मारे ६ मूर्ख, बावले, गूंगे, अंधे काणे इत्यादि की हँसी-दिल्लगी करे ७ अनाचार सेवन कर छिपावे ८ स्वयं अनाचार सेवनकर दूसरे के सिरपर डाले, ९ भरी सभा में मिश्र भाषा बोले, १० सामर्थ्य रहते हुये गरीबों की सहायता न करे; ११ ब्रह्मचारी न होकर 'ब्रह्मचारी' नाम धारण करे, १२ बालब्रह्मचारी न होकर 'बालब्रह्मचारी' कहलाये, १३ सेठ का धन गुमास्ता चुरावे, १४ सब मिलकर किसी को मुखिया बनावे और अधिकार पाकर सब को दुख देवे, १५ स्त्री पति परस्पर विश्वासघात करें, १६ परोपकारी तथा अनेकों के आधारभूत पुरुष को मारे; १७ राजा के घात का चिन्तन करे, १८ साधु को संयम से भ्रष्ट करे,

१९ तीर्थंकर भगवान की निंदा करे, २० तीर्थंकर प्रणीत धर्म की निंदा करे, २१ आचार्य, उपाध्याय की निंदा करे, २२ आचार्य उपाध्याय की भक्ति न करे, २३ पण्डित नाम धरावे, २४ तपस्वी कहलावे, २५ वृद्ध रोगी, तपस्वी नवदीक्षित की वैयावृत्य-सेवा न करे, २६ साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूप चार तीर्थों में भेद डाले, २७ ज्योतिष, निमित्त, मन्त्र, यन्त्र, करे २८ देवता, मनुष्य सम्बन्धी अप्राप्त भोगों की इच्छा करे, २९ धर्मक्रिया से प्राप्त सम्पत्ति वाले देवता, मनुष्य आदि देखकर उनकी निन्दा करे, ३० अपने पास में कुछ भी देवबल न होकर अपनी प्रतिष्ठा के लिये मुझे अमुक देव सिद्ध है ऐसी जाहिरात करे। (ये त्याग करने योग्य) एगतीसाए सिद्धाइगुणेहिं-एकतीस प्रकार के सिद्ध भगवान के गुणोंमें शंकारूप दोषों से। वे गुण इस प्रकार है—१ मति-ज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय ४ मनःपर्यवज्ञानावरणीय, ५ केवल ज्ञानावरणीय, (इन पाँच ज्ञानावरणीय कर्म के क्षय से अनन्त ज्ञान संपन्न) ६ चक्षु दर्शनावरणीय, ७ अचक्षु दर्शनावरणीय, ८ अवधिदर्शनावरणीय, ९ केवल दर्शनावरणीय, १० निद्रा, ११ निद्रा निद्रा, १२ प्रचला, १३ प्रचला-प्रचला, १४ स्त्यानर्द्धि (इन ९ दर्शनावरणीय कर्मों के क्षय होने से अनन्त केवल-दर्शन संपन्न) १५ साता वेदनीय (इन दो वेदनीय कर्मों के क्षय होने से अनन्त निराबाध सुखी सम्पन्न) १७ दर्शन मोहनीय, १८ चारित्र मोह-नीय, (इन दो मोहनीय कर्मों के क्षय होनेसे अनन्त क्षायिक सम्यक्त्व संपन्न) १९ नरकायु, २० तिर्यञ्चायु, २१ मनुष्यायु, २२ देवायु, (इन चार आयुष्य कर्मों के क्षय होने से अजरामर) २३ शुभनाम २४ अशुभनाम, (इन दो नाम कर्मों के क्षय होने से अरूपी) २२

उच्चगोत्र, २६ नीचगोत्र, (इन दो गोत्र कर्मों के क्षय से अखोड़-निर्दोष) २७ दानांतराय, २८ लाभांतराय, २९ भोगांतराय ३० उपभोगांतराय और ३१ बलवीर्यान्तराय (इन पांच अन्तराय कर्मों के क्षय से अनन्त शक्ति संपन्न) इस तरह ८ कर्म की ३१ प्रकृतियों का क्षय होने से उत्कृष्ट श्रेष्ठ ८ गुणों के धारक सिद्ध भगवान हैं। तथा १ काला, २ हरा, ३ लाल, ४ पीला, ५ श्वेत, (इन पांच वर्णोंसे रहित) ६ सुरभिगंध, ७ दुर्गन्ध (इन दोनों गन्धोंसे रहित) ८ तीखा, ९ कड़वा, १० कसायला, ११ खट्टा, १२ मीठा, (इन पाँचों रसों से रहित) १३ खरदरा, १४ सुहाला १५ हलका, १६ भारी, १७ ठंढा, १८ गरम, १९ लूखा, २० चिकना, (इन आठों स्पर्शो से विलग) २१ वर्तुल, २२ त्रिकोण, २३ चतुष्कोण, २४ मण्डल, २५ दीर्घ, (इन पांचों संस्थान-आकारों से रहित) २६ स्त्रीवेद, २७ पुरुषवेद, २८ नपुंसकवेद । (दोनों से रहित) २९ अशरीर. ३० असंग, ३१ अकर्म ये ३१ गुण सिद्ध भगवान् के हैं (ये जानने योग्य हैं)। बत्तीसाए जोगअसंगहेहिं बत्तीस प्रकार के योगों को न संग्रह करने रूप दोषों से अर्थात् ये ३२ योग अवश्य संग्रह करने योग्य हैं। वे इस प्रकार हैं—१ शिष्य को वह आचार्य पद के योग्य बने ऐसा ज्ञान देना, २ किए हुए दोषों को गुरु से कह देना, ३ गुरु का दोष किसी से नहीं कहना, ४ संकट आने पर भी धर्म में खूब दृढ़ रहना ५ इहलोक-परलोक विषयक इच्छा-रहित तप करना, ६ किसी की भी दी हुई हितशिक्षा ग्रहण करके उसको उपयोग में लाना, ७ शरीर की शोभा न बढाते हुए सादगी से रहना, ८ भगवान् ने जिस कुल में गोचरी करने की आज्ञा दी है उस कुल में

गोचरी करना, ९ किसी को मालूम न पड़े ऐसी तपश्चर्या करना १० परीषह आने पर भी समभाव रखना, ११ यत्किंचिद् भी कपट नहीं करते हुये सदा सरल स्वभाव से रहना, १२ आत्म-दमन करते हुए शुद्ध संयम पालना, १३ मनोनिग्रह करके सम्यक्त्व को शुद्ध रखना, १४ चिन्ता को दूर करके चित्त में समाधि रखना, १५ सतत ज्ञानाचार अर्थात् पढ़ना और पढ़ाना, दर्शनाचार अर्थात् सम्यक्त्वी वनना और बनाना, चारित्राचार अर्थात् संयम पालना और पलवाना, तपाचार अर्थत् तप करना और कराना, वीर्याचार अर्थात् धर्म सेवन करना और कराना, १६ धैर्य रखना, १७ विनय-युक्त रहना तथा वयोवृद्ध, गुणवृद्ध का सम्मान करना, १८ वैराग्ययुक्त रहना अर्थात् इन्द्रियों को विषयों में लुब्ध नहीं होने देना, १९ शुद्ध क्रिया अर्थात् तप-जप करणी में खूब पराक्रम फोड़ना, २० आत्मगुणों की रक्षा 'निधान' की तरह करते रहना। २१ धर्म के कामों में चित्तवृत्ति की वृद्धि करते रहना, २२ संवर व धर्म को पुष्ट करते रहना तथा पाखण्ड का खण्डन करना, २३ अपनी आत्मा में जो-जो दुर्गुण हैं उनको ढूंढ-ढूंढ कर निकालते रहना, २४ मूलगुण-पाँच महाव्रत, उत्तरगुण-नौकारसी आदि तप तथा प्रत्याख्यान का निर्मलता से पालन करना, २५ शास्त्र, वस्त्र पात्रादि उपकरण अपने पास अच्छे हों तो उनका अभिमान नहीं करना और कायोत्सर्ग करना, २६ पाँच प्रमादों को अर्थात् (१-मद्य, २ विषय, ३ कषाय, ४ निद्रा, ५ विकथा) इनको कम करना २७ बिना मतलब नहीं बोलना और परिमित बोलना, २८ धर्म-ध्यान, शुक्लध्यान को करते रहना, सदा शुभयोग रखकर मन में कुविचार नहीं आने देना तथा कुत्सित वचन नहीं बोलते हुये

शरीर को अयोग्य कर्मों में नहीं लगाना, २९ मारणान्तिक वेदना प्राप्त होने पर भी परिणामों को शुद्ध और स्थिर रखना, ३० भोग तथा पापकर्मों का त्याग करना, ३१ लगे हुए पापों की आलोचना तथा निन्दा करके शुद्ध होना, ३२ संलेखना--- संथारा कर समाधिमरण प्राप्त करना। (ये स्वीकार करने योग्य) तेत्तीसाए आसायणाए--तेंतीस प्रकार की आशातना अर्थात् गुणों को आच्छादन करने वाले गुरुजनों के साथ दुर्व्यवहारों से। वे आशातनाएँ इस प्रकार हैं—१ गुरु के आगे चलें, २ गुरु के बराबर चलें, ३ गुरु के पीछे लग कर चलें, ४ गुरु के आगे खड़ा रहें, ५ गुरु के बराबर खड़ा रहें, ६ गुरु के पीछे सटकर खड़ा रहें, ७ गुरु के आगे बैठें, ८ गुरु के बराबर बैठें, ९ गुरु के पीछे सटकर बैठें, १० गुरु के पहले शुचि करें, ११ गुरु के पहले ईर्यावही पडिक्कमें अर्थात् चौवीसस्तव करें १२, गुरु के पहले दूसरों से बातें करें, १३ गुरु के बुलाने पर जागृत होते हुए भी जवाब न देवें, १४ आहार आदि लाये हुए पदार्थों को गुरु के पहले दूसरों को बतावें, १५ गुरु के पहले दूसरों के आगे आलोयणा करें, १६ गुरु के पहले दूसरों को कोई वस्तु देवें, १७ गुरु के पूछे बिना दूसरों को वस्तु देवें, १८ गुरु से पहले अच्छे पदार्थ का सेवन स्वयं करें, १९ गुरु बुलावे तो बोले नहीं, २० गुरु बुलावे तब बिछौने पर बैठे-बैठे उत्तर देवें, २१ गुरु को 'रे' 'तू' इत्यादिक तुच्छ शब्दों से बुलावें, २२ गुरु कहे कि वैयावृत्य-सेवा-करोगे तो लाभ होगा, उत्तर में शिष्य कहे कि तुम करोगे तो तुमको भी लाभ होगा, २३ गुरु से झगड़ा करें, २४ गुरु की भूल दूसरों के आगे कहें, २५ गुरु व्याख्यान में भूल जायँ तो

'ऐसा कहो' इस तरह कहें २६ गुरु की प्रशंसा सुनकर हर्षित न होवें २७ बार तीर्थ में फूट डाल कर 'ये गुरु के' 'ये मेरे हैं' इस तरह कहें, २८ किसी के प्रश्न पूछने पर गुरु की आज्ञा बिना आप उत्तर देवें, २९ व्याख्यान मे अधिक समय लगे तो 'गोचरी का समय हो गया' ऐसा कहें ३० गुरु के दिये हुए व्याख्यान को उसी परिषद् मे विस्तृत कर देवें. ३१ गुरु के बिस्तरे आदि को पांव लगावें ३२ गुरु के भण्डोपकरण को उनकी आज्ञा बिना अपने काम में लावें ३३ गुरु से द्रव्यतः ऊँचे आसन पर बैठें और भावतः भी कड़ककर रहें। (ये त्याग करने योग्य हैं) तथा १ अरिहन्ताणं आसायणाए–अरिहन्तों की आशातना से २ सिद्धाणं आसायणाए–सिद्ध- भगवान् की आशातना से। ३ अयारियाणं आसायणाए–आचार्यों की आशातना से । ४ उवज्झायाणं आसायणाए–उपाध्यायों की आशातना से। ५ साहूणं आसायणाए–साधुओं की आशातना से। ६ साहुणीण आसायणाए–साध्वी समुदाय की आशातना से। ७ सावयाणं आसायणाए–श्रावकों की आशातना से। ८ सावियाणं आसायणाए–श्राविकाओं की आशातना से। ९ देवाणं आसायणाए–देवों की आशातना से। १० देवीणं आसायणाए—देवियों की आशातना से। ११ इहलोगस्स आसायणाए-मनुष्य लोक सम्बन्धी आशातना से। १२ परलोगस्स आसायणाए–देव तथा नारकी लोक सम्बन्धी आशातना से। १३ केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स आसायणाए–केवली भगवान् तथा केवली-प्रणीत धर्म की आशातना से। १४ सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स आसायणाए–देवसहित ऊर्ध्व-लोक, मनुष्यसहित तिरछा लोक, असुर-कुमार सहित अधोलोक, इनकी आशातना से १५ सव्व-पाण-भूय-

जीव-सत्ताणं आसायणाए-सर्व प्राणी अर्थात् द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय,चतुरिन्द्रिय, भूत अर्थात् वनस्पति,जीव अर्थात् पंचेन्द्रिय,सत्व अर्थात् पृथ्वी, पानी,अग्नि,वायु इनकी आशातना से,१६कालस्स आसायणाए-तीनों कालकी आशातनासे। १७ सुयस्स आसायणाए-सूत्रों के सिद्धान्तों की आशातनासे ।१८सुयदेवयाए आसायणाए-सूत्रके देवजी अर्थात् तीर्थङ्कर,गणधरकी आशातनासे। १९वायणायरिस्स आसायणाए-वर्तमान कालमें सूत्र-ज्ञान दाता आचार्य आदि-आशातनासे।२०‡जंवाइद्धं-सूत्र

---

‡ अस्वाध्याय इस प्रकार है-१ तारा टूटे तो एक मूहूर्त तक अस्वाध्याय, २ प्रातःकाल और संध्याकाल में लाल रङ्ग के बादल रहे तब तक अस्वाध्याय, ३ मेघगर्जने पर मूहूर्त तक, ४ बिजली चमके तो एक मूहूर्त तक, (परन्तु) (आर्द्रा से स्वाति नक्षत्र तक गाज बीज का अस्वाध्याय नहीं गिनना) ५ बिजली कडके तो आठ प्रहर तक, ६ शुक्लपक्ष में १-२-३ के रोज चन्द्रमा दिखे तब तक, ७ बादल में मनुष्य, पिशाच, पशु आदि के चिन्ह दिखें तब तक, ८ धुन्ध (कुहरा) पडे तब तक, ९ मेघर अर्थात् पानी सहित धुन्ध पडे तब तक, १० आकाश में धूल का गोटा अर्थात् वायुमंडल चढे तब तक, (ये १० आकाश सम्बन्धी अस्वाध्याय हैं) ११ मांस, १२ रक्त, १३ हड्डी, १४ विष्ठा, ये दृष्टि में आवे तो, १५ श्मसान के चारों तरफ १००-१०० हाथ तक, १६ राजा मर जाने पर हडताल रहे तब तक, १७ राजा का युद्ध होवे तब तक १८-१९ चंद्र-सूर्य ग्रहण खग्रास हों तो १२ प्रहर तक और कमी हो तो कम, पंचेन्द्रिय का कलेवर (शव) पडा हो वहाँ से १०० हाथ तक (ये १० औदारिक शरीर सम्बन्धी अस्वाध्याय हैं) २१ भाद्रपद पौर्णिमा २२ आश्विन कृष्णा प्रतिपदा, २३ आश्विन पौर्णिमा, २४ कार्तिक कृष्णा प्रतिपदा (ये दो कितनेक नही मानते) २५ कार्तिक पूर्णिमा, २६ मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा, २७ चैत्री पूर्णिमा, २८ वैशाख कृष्णा प्रतिपदा, २९ आषाढी पूर्णिमा, ३० श्रावण कृष्णा प्रतिपदा, (ये चार महोत्सव पूर्णिमा और चार महा प्रतिपदा) इन समय दिन रात्रि में सूत्र नहीं पढना, ३१ प्रातःकाल, ३२ मध्यान्ह काल, ३३ संध्याकाल, ३४ मध्यरात्रि, इन चारों समय में एक मूहूर्त तक शास्त्र नहीं पढना। इन अस्वाध्यायों का भग करने से जिज्ञासा का भंग होता है, उत्पाद आदि रोग तथा किसी समय प्रबल विघ्न हो जाता है, इसलिए अस्वाध्याय बचाकर यत्नपूर्वक सूत्र पठन करना चाहिए।

उलट पढा है, २१ वच्चामेलियं–अन्य सूत्रों का पाठ अन्य सूत्रों के साथ मिलाया हो, २२ हीणक्खरं–हीन अक्षरयुक्त पाठ-पठन किया हो, २३ अच्चक्खरं–अधिक अक्षर युक्त पाठ पढा हो, २४ पयहीणं–पद से रहित पाठ पढा हो, २५ विणयहिणं–अविनय से पठन किया हो, २६ जोगहीणं–योग से रहित पाठ पढा हो, २७ घोसहीणं--उदात आदि स्वरों से रहित पाठ पढा हो, २८ सुट्ठुदिण्णं--अयोग्य पात्र को ज्ञान दान दिया हो, २९ दुट्ठुपडिच्छियं-दुष्ट भावना से ज्ञान ग्रहण किया हो, ३० अकाले कओ सज्झाओ–अकाल में सूत्र का स्वाध्याय किया हो,३१ काले न कओ सज्झाओ समयपर सूत्रों का स्वाध्याय न किया हो, ३२ असज्झाए सज्झाइयं–अस्वाध्याय में स्वाध्याय किया हो, ३३ सज्झाए न सज्झाइयं–स्वाध्याय काल में स्वाध्याय न किया हो ये चोदह ज्ञान के अतिचार मिलाकर कुल तेंतीस हुए (ये त्याग करने योग्य)।
एएसिणं–इन ऊपर कहे हुए एगाइए–एक बोल से लगाकर। तेत्तीसाए ठाणाणं मज्झे--तेंतीस बोलों में । जे–जो बोल । जाणियव्वाइं--जानने-समझने योग्य हैं । ते–वे । णो णाया–नहीं जाने हो । जे–जो बोल । विप्पजहियव्वाइं–छोडने-त्याग करने योग्य है । ते–वे । णो विप्पजहिया--त्याग न किए हों । जे--जो बोल । समायरियव्वाइं--स्वीकार करने योग्य है । ते–वे । णो समायरियव्वा--स्वीकार न किए हों । तस्स मिच्छामि दुक्कडं--वह मेरा पाप निष्फल हो ।

'निर्ग्रन्थ प्रवचन का पाठ'

णमो चउव्वीसाए तित्थयराण उसभाइ-महावीर पज्जवसाणाणं, इणमेव णिग्गंथं पावयणं, सच्चं, अणुत्तरं, केवलीयं, पडिपुण्णं,

णेयाउयं, संसुद्धं, सल्लकत्तणं, सिद्धिमग्गं, मुत्तिमग्गं, णिज्जाणमग्गं, निव्वाणमग्गं, अवितहमविसंधि, सव्वदुक्खप्पहीणमग्गं, इअ ठिया जीवा, सिज्झंति बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वायंति, सव्वदुक्खाणमंत करंति, तं धम्मं सद्दहामि, पत्तियामि, रोएमि, फासेमि, पालेमि, अणुपालेमि, तं धम्मं सद्दहंतो, पत्तियंतो, रोयंतो, फासंतो, पालंतो, अणुपालंतो, तस्स-धम्मस्स-केवलिपण्णत्तस्स, अब्भुट्ठिओमि (यहाँ से आगे खड़े होकर बोलिये) आराहणाए, विरओमि विराहणाए, असंजमं परियाणामि, संजमं उवसंपज्जामि, अबंभं परियाणामि, बंभं उवसंपज्जामि, अकप्पं परियाणामि, कप्पं उवसंपज्जामि, अण्णाणं परियाणामि, णाणं उवसंपज्जामि, अकरियं परियाणामि, किरियं उवसंपज्जामि, मिच्छत्तंपरियाणामि, संमत्तं उवसंपज्जामि, अबोहिं परियाणामि, बोहिं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परियाणामि, मग्गं उवसंपज्जामि, जं संमरामि, जं च न संभरामि, जं पडिक्क-मामि, जं च न पडिक्कमामि, तस्स सव्वस्स, देवसियस्स, अइयारस्स पडिक्कमामि, समणोहं संजय-विरय-पडिहय-पच्चक्खायपावकम्मे, अनियाणो, दिट्ठिसंपण्णो, मायामोसं विवज्जओ, अढाइज्जेसु दीवस-मुद्देसु, पण्णरस कम्मभूमिसु, जावंति केइ साहू, रयहरण गुच्छग (मुहपत्तियं) पडिग्गहधरा, पंच महव्वयधरा, अट्ठारससहस्स सीलंग रहधरा, अक्खय-आयार-चारित्ता, ते सव्वे सिरसा, मणसा, मत्थएण वन्दामि ।

शब्दार्थ—

णमो-नमस्कार हो । चउवीसाए-चौवीस । तित्थयराणं—चार तीर्थ की स्थापना करनेवाले श्री तीर्थंकर देवों को । उसभाइ-ऋषभदेवजी से लगाकर । महावीरपज्जवसाणाणं - महावीर

स्वामीजी पर्यन्त । इणमेव-ऐसे तीर्थंकर देवों ने फरमाया हुवा। निग्गंथं पावयणं-निर्ग्रन्थ प्रवचन (शास्त्र) । सच्चं-सच्चा है। अणुत्तरं-सब में अत्युत्तम है । केवलियं-केवलज्ञानी महाराज द्वारा कथित है। पडिपुण्णं-प्रतिपूर्ण अर्थात् सकल विद्यागुण सहित है। णेयाउयं-न्याययुक्त है । संसुद्ध-सम्यक् प्रकार से शुद्ध अर्थात् सन्देह रहित है। सल्लकत्तणं-सब शल्ये-संशयों को दूर करनेवाला है। सिद्धिमग्गं-सिद्धि प्राप्त कराने का मार्ग है । मुत्तिमग्गं-आठ कर्मों से मुक्त होने का मार्ग है। निज्जाणमग्गं-सकल कर्मों का अन्त करानेवाला मार्ग है । निव्वाणमग्गं-कर्म रूप ताप को मिटाकर शीतलता प्राप्त करानेवाला मार्ग है। अवितहं-जैसा भगवान् ने फरमाया है । वैसा ही यथायोग्य है। अविसंधि-पूर्वापर विरोध रहित मार्ग है । सव्वदुक्ख-शारीरिक अथवा मानसिक सर्व प्रकार के दुःखों को । प्पहीण-क्षय करने का। मग्गं-मार्ग है। इअ-इस मार्ग के अन्दर । ठिया-रहते हुए । जीवा-जीव । सिज्झन्ति-सिद्ध होते हैं अर्थात् जैसे धान्य सीझने-परिपक्व होने से वह निरंकुर हो जाता है, वैसे ही उनके कर्म सीझ कर (जलकर) जन्मांकुर रहित हो जाते हैं । बुज्झन्ति-सकल पदार्थ को जानते हैं अर्थात् केवल-ज्ञानी हो जाते हैं । मुच्चन्ति-कर्मों से मुक्त हो जाते हैं । परिणि-व्वायति-जन्म जरा मरण के दुःखों को हटा कर शीतलीभूत होते हैं । सव्वदुक्खाणमन्तं करंति-शारीरिक और मानसिक सर्व प्रकार के दुःखों का अन्त करते हैं । तं धम्मं-उस धर्म को । सद्दहामि-मैं श्रद्धान करता हूँ । पत्तियामि-मैं प्रतीति निश्चय करता हूँ। रोएमि-अन्तःकरण से जंचाता हूँ । फासेमि-अंगीकार करता हूँ। पालेमि-पालन करता हूँ अर्थात् उक्त प्रकार से शास्त्रोक्त क्रिया

का आचरण करता हूँ। अणुपालेमि-द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव सर्व प्रकार से पालन करता हूँ। अर्थात् इससे ही मेरा परम कल्याण होगा ऐसा समझकर विशेष रीति से पालन करता हूँ। तं धम्मं-उस धर्म को। सद्दहन्तो-दूसरों को श्रद्धान करता हुआ। पत्तियन्तो-प्रतीति निश्चय कराता हुआ। रोयन्तो-रुचाता हुआ। फासन्तो-अंगीकार कराता हुआ। पालन्तो-पालन कराता हुआ। अणुपालन्तो-द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव सर्व प्रकार से विशेष रीति से पालन कराता हुआ। तस्स-उस। धम्मस्स केवलिपण्णत्तस्स-केवलज्ञानी (सर्वज्ञ) प्रणीत धर्म में। अब्भुट्ठिओमि-सावधान उद्यमी हुआ हूँ। आराहणाए-आराधना करने के लिए। विरओमि-निवृत्त हुआ हूँ। विराहणाए-विराधना (भंग) करने से। १ असंजमं-अठारह पापस्थानक रूप असंयम कोप, परियाणामि-छोड़ता हूँ, और संजमं-सत्रह प्रकार के संयम को। उवसंपज्जामि-अंगीकार करता हूँ। २ अबंभं परियाणामि-अठारह प्रकार के अब्रह्मचर्य को छोड़ता हूँ और बंभं उवसंपज्जामि-अठारह प्रकार के ब्रह्मचर्य को अंगीकार करता हूँ। ३ अकप्पं परियाणामि-अकल्पनीय अर्थात् ग्रहण करने के लिए अयोग्य आहारादिक को छोड़ता हूँ और कप्पं उवसंपज्जामि-कल्पनीय आहारादिक को स्वीकार करता हूँ। ४ अन्नाणं परियाणामि-अज्ञान को छोड़ता हूँ और णाणं-उवसंपज्जामि-ज्ञान को अंगीकार करता हूँ। ५ अकिरियं परियाणामि-मिथ्यात्वमय असत्य करणी को छोड़ता हूँ और किरियं-उवसंपज्जामि-समतामय सम्यक्त्व की सत्य करणी को अंगीकार करता हूँ। ६ मिच्छत्तंपरियाणामि-मिथ्यात्व को-झूठी श्रद्धा को छोड़ता हूँ और सम्मत्तं उवसंपज्जामि-सम्यक्त्व को-सच्ची श्रद्धा को

अंगीकार करता हूं। ७ अबोहिं परियाणामि-अबोध अर्थात् दुर्बोधता-मूर्खता के कर्त्तव्य को छोड़ता हूं और बोहिं उवसंपज्जामि-सुबोधता प्राप्त हो ऐसे कर्त्तव्य को अंगीकार करता हूं। ८ उम्मग्गं परियाणामि-जैन मार्ग से विपरीत मार्ग को छोड़ता हूं और मग्गं उवसंपज्जामि-ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तपरूप मोक्ष-मार्ग को अंगीकार करता हूँ। जं-जो दोष। संभरामि-मुझे स्मरण होता है। च-और। जं-जो दोष। न संभरामि-मुझे स्मरण नहीं होता है। जं पडिक्कमामि-जिन दोषों में से निवृत्त होता हूं। च-और। जं न पडिक्कमामि--जिन दोषों से निवृत्त नहीं हुआ हूं। तस्स सव्वस्स-उन सब। देवसियस्स-दिवस सम्बन्धी। अइयारस्स-अतिचार जो लगे हों उनसे। पडिक्कमामि-निवृत्त होता हूं। समणोहं-देशव्रती अथवा सर्वव्रती ऐसा श्रमण तपस्वी साधु मैं हूँ। संजय-संयति हूं। विरय-संसार से विरक्त हुआ हूँ तथा व्रती हूँ। पडिहय-आते हुए रोक दिये हैं। पच्चक्खाय-प्रत्याख्यान नियम लेने से। पावकम्मे-पापकर्म जिसने ऐसा मैं हूँ। अनियाणो-नियाणा (फलवांछा) रहित। दिट्ठिसंपण्णो-सम्यक् दृष्टिसहित हूँ। माया-कपट, मोसं-असत्य, विवज्जओ-छोड़ दिया हूँ। (अब दूसरों को वन्दन करता हूँ) अढ़ाइज्जेसु दीवसमुद्देसु-१ जम्बूद्वीप २ धातकी खण्ड द्वीप और पुष्करार्द्धद्वीप ये ढाई द्वीप। इनके मध्य में १ लवण समुद्र और २ कालोदधि समुद्र हैं अर्थात् ढाई द्वीप और दो समुद्रों में। पण्णरस कम्मभूमिसु-पन्द्रह कर्मभूमि मनुष्य के क्षेत्रों में अर्थात् असि-शस्त्र से क्षत्रिय, मषी-व्यापार से वैश्य, कृषि-खेती से कृषिकार, इन तीनों कर्मों के द्वारा जो उपजीविका करे, उन्हें कर्मभूमि मनुष्य कहते हैं। उनके

रहने के १५ क्षेत्र हैं। १ भरतक्षेत्र १ एरावतक्षेत्र और १ महाविदेहक्षेत्र ये तीन क्षेत्र जम्बूद्वीप में हैं। २ भरतक्षेत्र २ एरावतक्षेत्र और २ महाविदेहक्षेत्र ऐसे छः क्षेत्र घातकी खण्ड द्वीप में हैं और इसी तरह उपर्युक्त ६ क्षेत्र पुष्करार्द्धद्वीप में हैं। इन १५ क्षेत्रों में ही साधु होते हैं इसलिए। जावन्ति-जितने। केइ-कोई। साहु-साधु हैं वे। रयहरण-जिससे रज हटा सकते हैं वह रजोहरण। गुच्छग-गोच्छा, पून्जनी, (पाठान्तर–मुँहपत्तियं–मुख पर बन्धी हुई मुँहपत्ति) पडिग्गह-काष्ठपात्र, धरा–धारण करने वाले। (यह तो साधु का वेष कहा, अब आगे गुण कहते हैं) पंच महव्वयधरा–पांच महाव्रत को धारण करने वाले। अट्ठारस्स–अठारह, सहस्स–हजार। सीलंगरहधरा-शीलरूप रथ के धारक। अक्खय–अक्षय अखण्ड। आयार–आचार। चरित्ता–चारित्र को पालने वाले हैं। ते सव्वे–उन सब साधुओं को। सिरसा-मस्तक से। मणसा-शुद्ध अन्तःकरण से। मत्थएण वन्दामि–मस्तक झुकाकर वन्दन करता हूँ।

पांच पदों की वन्दना

दोहा ॥ प्रथम सात अक्षर पढो, पांच पढो चित लाय,
सात२ नव अक्षरा, पाप सकल क्षय जाय ॥१॥

पहिले पद श्री अरिहन्तजी, जघन्य वीस तीर्थंकरजी, उत्कृष्ट एक, सौ सित्तर देवाधिदेवजी, उनमें वर्तमानकाल में वीस विहर-मानजी महाविदेहक्षेत्र में विचरते हैं, एक हजार आठ लक्षण के धारणहार, चौंतीस अतिशय पेंतीस वाणी करके विराजमान चौसठ इन्द्रों के वन्दनीय, पूजनीय, अठारह दोष रहित, बारह गुण सहित अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तचारित्र, अनन्तबलवीर्य, अनन्तसुख, दिव्य

ध्वनि, भामण्डल, स्फटिक-सिंहासन, अशोकवृक्ष, कुसुम-वृष्टि देव-दुन्दुभि, छत्र धरावे, चँवर विजावें, पुरुषाकार पराक्रम के धारण-हार, अढ़ाईद्वीप पन्द्रह क्षेत्र में विचरें, जघन्य दो क्रोड केवली और उत्कृष्ट नव क्रोड केवली, केवलज्ञान,केवलदर्शन के धारणहार, सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के जाननहार ।

सवैया

नमो श्री अरिहन्त, करमा को कियो अन्त हुवा सो केवलवन्त, करुणा भण्डारी हैं । अतिशय चौंतीस धार, पैंतीस वाणी उच्चार, समझावे नर-नार, पर उपकारी हैं । शरीर सुन्दराकार, सूरज सो झलकार, गुण हैं अनंतसार दोष परिहारी हैं । कहत तिलोकरिख, मन वच काय करि लुलि लुलि बारम्वार वन्दना हमारी हैं ।।१।।

ऐसे अरिहन्त भगवन्त दीनदयाल महाराज आपकी अविनय आशातना (दिवस सम्बन्धी) की हो तो वारम्वार खमाता हूँ । हे अरिहन्त भगवन् ! मेरा अपराध क्षमा करिए, हाथ जोड, मान मोड, शीष, नमाकर १००८ वार नमस्कार करता हूँ ।
तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पायहिणं करेमि, वंदामि नमंसामि, सक्क-रेमि सम्माणेमि कल्काणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि । आप मांगलिक हो उत्तम हो, हे स्वामी ! हे नाथ ! आपका इस भव-परभव, भवभव में सदाकाल शरण हो ।

दूजे पद श्री सिद्ध भगवान् महाराज पन्द्रह भेदे अनन्त सिद्ध हैं आठ कर्मों का क्षय करके मोक्ष पहुँचे हैं (१) तीर्थसिद्धा, (२) अतीर्थसिद्धा, (३) तीर्थङ्करसिद्धा, (४) अतीर्थङ्करसिद्धा, (५) स्वयंबुद्धसिद्धा, (६) प्रत्येकबुद्धसिद्धा, (७) बुद्धबोधितसिद्धा,

(८) स्त्रीलिंगसिद्धा, (९) पुरुषलिंगसिद्धा, (१०) नपुंसकलिं-गसिद्धा, (११) स्वलिंगसिद्धा, (१२) अन्यलिंगसिद्धा, (१३) गृहस्थलिंगसिद्धा, (१४) एकसिद्धा, (१५) अनेकसिद्धा, जहाँ जन्म नहीं, जरा नहीं, मरण नहीं, भय नहीं, राग नहीं, शोक नहीं, दुःख नहीं, दारिद्र नहीं, कर्म नहीं, काया नहीं, मोह नहीं, माया नहीं, चाकर नहीं, ठाकर नहीं, भूख नहीं, तृषा नहीं, जोत में जोत विरा-जमान सकल कार्य सिद्ध करके चउदह प्रकारे पन्द्रह भेदे अनन्त सिद्ध भगवन्त हुआ, अनन्त सुखों में लीन, अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, क्षायिक समकित, निराबाध, अटल अवगाहना, अमूर्त, अगुरुलघु, अनन्तवीर्य, आठ गुण करके सहित हैं।

॥ सवैया ॥

सकल करम टाल, वश कर लियो काल, मुगति में रह्या माल, आतमा को तारो हैं। देखत सकल भाव, हुवा है जगत राव, सदा ही क्षायिक भाव, भये अविकारी है। अचल अटल रूप, आवे नहीं भवकूप, अनुप सरूप ऊप, ऐसे सिद्ध धारी हैं। कहत तिलो-करिख, बताओ ए वास प्रभु, सदा ही उगंते सूर, वन्दना हमारी है ॥२॥

ऐसे सिद्ध भगवन्तजी महाराज! आपकी (दिवस संबन्धी) अविनय आशातना की हो तो वारम्वार खमाता हूँ। हे सिद्ध भगवन्! मेरा अपराध क्षमा करिए, हाथ जोड, मान मोड, शीष नमाकर १००८ वार नमस्कार करता हूँ।

तिक्खुत्तो आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वन्दामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं चेइयं, पज्जुवासामि मत्थएण वन्दामि।

आप मंगलिक हो, आप उत्तम हो, आपका इस भव, परं भव, भव-भव में सदाक़ाल शरण हो।

तीजे पद श्रीआचार्यजी म. छत्तीस गुण करके विराजमान पांच महाव्रत पालें पांच आचार पालें, पांच इन्द्रिय जीतें, चार कषाय टालें, नववाड सहित शुद्ध ब्रह्मचर्य पालें, पांच समिति तीन गुप्ति शुद्ध आराधें, आठ सम्पदा, (१ आचारसम्पदा, २ श्रुतसम्पदा, ३ शरीरसम्पदा, ४ वचनसम्पदा, ५ वाचनसम्पदा, ६ मतिसम्पदा, ७ प्रयोगमतिसम्पदा, ८ संग्रहसम्पदा) सहित हैं।

सवैया

गुण है छत्तीस पुर, धरत धरम उर, मारत करम क्रूर सुमति विचारी हैं। शुद्ध सो आचारवन्त सुन्दर है रूप कंत, भण्या है सभी सिद्धान्त, वाचना सुप्यारी है। अधिक मधुरवेण, कोई नहीं लोपे कॆण, सकल जीवांका सेण, कीरत अपारी है। कहत तिलोक-रिख, हितकारी देत सीख ऐसे आचारज ताकुं वन्दना हमारी है ॥३।

ऐसे आचार्यजी न्यायपक्षी भद्रिक परिणामी, परमपूज्य, कल्पनीक, अचित वस्तु के ग्रहणहार, सचित्त के त्यागी, वैरागी, महागुणी गुण के अनुरागी, सौभागी हैं, ऐसे आचार्यजी महाराज आपकी (दिवस सम्बन्धी) अविनय आशातना की हो तो वारम्वार खमाता हूँ। हे आचार्यजी महाराज! मेरा अपराध आप क्षमा करिये, हाथ जोड़, मान मोड़ शीप नमाकर १००८ वार नमस्कार करता हूँ।

तिक्खुत्तो आयाहिणं, पयाहिणं करेमि, वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं पज्जुवासामि मत्थएण वन्दामि।

आप मंगलिक हो आप उत्तम हो, हे स्वामी ! हे नाथ ! आपका इस भव पर भव, भव-भव में सदाकाल शरण हो।

चौथे पदश्री उपाध्यायजी म० पच्चीस गुण करके सहित (ग्यारह अंग बारह उपांग, चरणसत्तरी करणसत्तरी इन पच्चीस गुण करके सहित,तथा ग्यारह अंग का पाठ अर्थ सहित संपूर्ण जाने, और १४ पूर्व के पाठक) निम्नोक्त बत्तीस सूत्र के जानकार, ग्यारह अंग-१ आचारांगजी, २ सूयगडांगजी, ३ ठाणांगजी, ४ समवायांगजी, ५ विवाहपन्नत्ति (भगवतीजी) ६ ज्ञाताधर्मकथा, ७ उपासगदसा, ८ अन्तगडदसा, ९ अणुत्तरोववाई, १० प्रश्नव्याकरणजी, ११विपाकसूत्र। बारह उपांग, १उववाई २रायप्पसेणी,३ जीवाभिगम, ४ पन्नवणा, ५ जम्बूद्वीपपन्नत्ति, ६ चंद्रपन्नत्ति, ७ सूरपन्नत्ति, ८ निरयावलिया, ९ कप्पवडंसिया, १० पुप्फिया,११ पुप्फचूलिया, १२ वण्हिदसा। चार मूलसूत्र- (१) उत्तराध्ययन, (२) दशवैकालिक, (३) नन्दीसूत्र (४) अनुयोगद्वार। चार छेद-(१) दशाश्रुतस्कन्ध (२) वृहत्कल्प (३) व्यवहारसूत्र (४) निशीथसूत्र और बत्तीसवां आवश्यकसूत्र इत्यादि अनेक ग्रन्थ के जानकार सात नय, निश्चय, व्यवहार, चार प्रमाण आदि स्वमत तथा अन्य मत के जानकार, मनुष्य या देवता कोई भी विवाद में जिनको छलने में समर्थ नहीं, जिन नहीं पण जिन सरीखे, केवली नहीं, पण केवली सरीखे हैं ।

॥ सवैया ॥

पढत इग्यारे अंग करमांसु करे जंग पाखण्डी को मान भंग, करण हुसियारी है। चवदे पुरब धार, जानत आगम सार, भवियन के सुखकार भ्रमता निवारी है। पढावे भविक जन, स्थिर

कर देत मन तप करी तावे तन, ममता निवारी है। कहत तिलोक रिख, ज्ञानभानु परतिख, ऐसे उपाध्याय ताकूं, वन्दना हमारी है ॥ ४ ॥

ऐसे उपाध्यायजी महाराज मिथ्यात्वरूप अन्धकार के मेट-नहार, समकित रूप उद्योत के करनहार, धर्म से डिगते प्राणी को स्थिर करें, सारए, वारए, धारए, इत्यादिक अनेक गुण करके सहित हैं ऐसे श्री उपाध्यायजी महाराज आपकी (दिवस सम्बन्धी) अविनय आशातना की हो तो बारम्बार खमाता हूँ, हे उपाध्यायजी महाराज ! मेरा अपराध क्षमा करिए, हाथ जोड, मान मोड, शीष नमाकर १००८ वार नमस्कार करता हूँ ।

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं करेमि, वंदामि, नमंसामि सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं चेइयं, पज्जुवासामि, मत्थएण वन्दामि ।

आप मंगलिक हो, आप उत्तम हो, हे स्वामी ! हे नाथ ! आपका इस भव, पर भव, भव-भव में सदाकाल शरण हो ।

पांचवें पद 'नमो लोए सव्वसाहूणं' कहिए अढाई द्वीप पन्द्रह क्षेत्र रूप लोक के विषे सर्व साधुजी, जघन्य दो हजार करोड, उत्कृष्ट नव हजार करोड जयवन्ता विचरें, पांच महाव्रत पालें, पांच इन्द्रिय जीतें, चार कषाय टालें, भावसच्चे, करणसच्चे, जोगसच्चे, क्षमावन्त, वैराग्यवन्त मनसमाधारणीया, वयसमाधारणीया, काय-समाधारणीया, नाणसम्पन्ना, दंसणसम्पन्ना, चारित्तसंपन्ना, वेदनीय समाअहियासनीया, मरणान्तिकसमा अहियासनीया हैं, ऐसे सत्ताईस गुण करके सहित, पाँच आचार पालें, छः काय की रक्षा करें, आठ मद छोडें, नववाड सहित ब्रह्मचर्य पालें, दश प्रकार यति

धर्म धारें, बारे भेदे तपस्या करें, सत्रह भेदे संयम पालें, अठारह पाप को त्यागें, बाईस परिषह जीतें, तीस महामोहनीय कर्म निवारें, तेतीस आशातना टालें, बयालीस दोस टाल के आहार पानी लेवें, सैंतालीस दोष टाल के भोगें, बावन अनाचार टालें, तेंडिया (बुलाया) आवे नहीं, नोतिया जीमें नहीं सचित्त के त्यागी, अचित्त, के भोगी, लोच करें, खुले पैर चालें इत्यादि कायक्लेश करें, और मोह-ममता रहित हैं ।

सवैया

आदरी संयम भार, करणी करे अपार, समिति गुपति धार, विकथा निवारी हैं । जयणा करे छः काय, सावद्य न बोलें वाय, बुझाय कषाय लाय' किरिया भण्डारी है । ज्ञान भणे आठूं याम, लेवें भगवन्त नाम, धरम को करें काम, ममता कूं मारी है । कहत तिलोकरिख, करमां को टालें विष, ऐसे मुनिराज ताकूं वन्दना हमारी है ।।५।।

ऐसे मुनिराज महाराज आपकी (दिवस सम्बन्धी) अविनय आशातना की हो तो वारम्वार खमाता हूँ । हे मुनिराज ! मेरा अपराध क्षमा करिये, हाथ जोड, मान मोड, शीष नमाकर १००८ बार नमस्कार करता हूँ ।

तिक्खुत्तो आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वन्दामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं चेइयं पज्जुवासामि । आप मांगलिक हो, उत्तम हो' हे स्वामी ! आपका इस भव पर-भव भवभव में सदाकाल शरण हो ।

णमो मम धम्मायरियाणं अर्थात् मेरे धर्माचार्यजी श्री श्री (यहाँ अपने गुरु महाराज का नाम लेना) को वन्दना नमस्कार

होवे। गुरुजी महाराज साधुजी के गुणसहित, धर्मोपदेशक के दातार सम्यक्त्वरूप रत्न के दातार, संसार समुद्र से तारने वाले, अज्ञान अन्धकार को मिटाने वाले, मोक्षमार्ग में लगाने वाले, अनन्तानन्त उपकारी महापुरुष।

॥ सवैया ॥

जैसे कपडा को थान, दरजी वेतत आन, खंड २ करे जाण, देत सो सुधारी है। काष्ठ को ज्यों सूत्रधार, हेम को कसे सुनार, माटी को ज्यों कुम्भकार, पात्र करे त्यारी है। धरती को किर-सान, लोह को लुहार जान, शिलावट शिला आण, घाट घडे भारी है। कहत तिलोकरिख सुधारे ज्यों गुरु सीख, गुरु उपकारी नित लीजे वलिहारी है ॥१॥ गुरु मित्र गुरु मात, गुरु सगा गुरु तात, गुरु भूप गुरु भ्रात गुरु हितकारी है। गुरु रवि, गुरु चंद्र, गुरु देव' गुरु इन्द्र' गुरु देत हैं आनन्द, गुरुपद भारी है। गुरु देत ज्ञान ध्यान गुरु देत दान मान, गुरु देत मोक्षस्थान सदा उपकारी है कहत तिलोकरिख, भली-भली दीन सीख, पल पल गुरुजी को, वन्दना हमारी है ॥२॥

गुरुदेव महाराज ! आपकी (दिवस सम्बन्धी) अविनय आशातना की हो तो माफ कीजिये। हाथ जोड मान मोड शीष नमाकर वारम्वार खमाता हूं।

तिक्खुत्तो आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि मत्थएण वन्दामि।

आपका इस भव, पर भव, भव-भव में सदाकाल शरण हो।

॥ दोहा ॥

अनन्त चोवीसी जिन नमुं, सिद्ध अनन्ता क्रोड ।
केवल ज्ञानी गणधरा, वन्दूं बे कर जोड ॥१॥
दोय कोडि केवलधरा, विहरमान जिन बीस ।
सहस्त्र युगल कोडी नमूं, साधु नमूं निश दीस ॥२॥
धन साधु धन साधवी, धन–धन है जिनधर्म ।
ये समर्या पातक झरें, टूटें आठों कर्म ॥३॥
अंगुष्ठे अमृत वसे, लब्धि तणा भण्डार ।
श्री गुरु गौतम समरिए, वांछित फल दातार ॥४॥
गुरु दीपक गुरु चांदणो, गुरु बिन घोर अन्धकार ।
पलक न विसरुं तुम भणी, गुरु मुझ प्राण आधार ॥५॥
सुख देवा दुःख मेटवा, यही तुम्हारी वाण ।
मोय दासनी बीनती, सुणजो कृपानिधान ॥६॥
जय जय श्री परमेष्ठिनें, जय जय श्री जिन वेण ।
जय जय श्री गुरु की रहो, दिया सुमारग जैन ॥७॥

खमत खामना का पाठ ।

आर्यावृत्तम् ।

आयरिए उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुलगणे य ।
जे मे केइ कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि ॥१॥
सव्वस्स समण संघस्स, भगवओ अंजलि करिय सीसे ।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि ॥२॥
सव्वस्स जीवरासिस्स, भावओ धम्म-निहिय-नियचित्तो
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि ॥३॥

अनुष्टुपवृम् ।

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमन्तु मे ।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झ न केणइ ॥४॥

आर्यावृत्तम् ।

एवमहं आलोइयि, निंदिय गरहिय दुगंछियं सम्मं ।
तिविहेण पडिक्कंतो, वन्दामि जिणं चउव्वीसं ॥५॥

शब्दार्थ—

आयरिए—आचार्य। उवज्झाए—उपाध्याय। सीसे—शिष्य। साहम्मिए—स्वधर्मी। कुल—एक आचार्य के अनेक शिष्य। गणं—बहुत आचार्यों का शिष्य परिवार। य—और (इनके ऊपर) जे—जो। मे—मैंने। केइ—कोई भी। कसाय—क्रोधादिक कषाय किया हो तो। सव्वे—सभी को। तिविहेणं—मन, वचन, काया, इन तीनों योगों से। खामेमि—क्षमा चाहता हूँ॥१॥ सव्वस्स—संपूर्ण। समणसंघस्स—श्रमण संघ अर्थात् साधु, साध्वीं, श्रावक-श्राविका रूप। भगवओ—भगवान् का। (जो कोई अपराव किया हो तो) सीसे—मस्तक पर। अंजलि—अंजलि को। करिय—करके। सव्वं-सब को। खमावइत्ता—क्षमापना करके। अहयंपि—मैं भी। सव्वस्स—सबका अपराध। खामेमि—क्षमा करता हूँ॥ २॥ सव्वस्स—सम्पूर्ण। जीवरासिस्स—जीव समूह का (अपराध किया हो तो) सव्वं—सब को। खमावइत्ता—क्षमापना करके। भावओ—भाव से। धम्मं—धर्म में। निहिय—लगा हुआ है। नियचित्तो—अपना चित्त ऐसा। अहयंपि—मैं भी। सव्वस्स—सब का अपराध। खमामि—क्षमा करता हूँ॥ ३॥ सव्वे—(मैं) सब। जीवे—जीवों को। खामेमि—क्षमा करता हूँ। सव्वे—सव। जीवा—जीव। मे—मुझको खमंतु—

क्षमा करें। मे—मेरी। सव्वभुएसु—सम्पूर्ण प्राणियों में। मित्ती—मित्रता है। मज्झ—मेरी। केणइ—किसी के साथ। वेरं—शत्रुता। न—नहीं (है) एवं—इस प्रकार। अहं—में। सम्मं—सम्यक् प्रकार। आलोइय—आलोचना करके। निंदिय—निंदा करके। गरहिय—गर्हा (विशेष निन्दा) करके (और) दुगंछियं—जुगुप्सा। (ग्लानि) करके। तिविहेण—मन, वचन, काय, द्वारा (पापों से) पडिक्कन्तो—निवृत्त होता हुआ। चउव्वीसं—चोवीस। जिणे—अरिहन्त भगवान् को। वन्दामि—वन्दना करता हूँ।

श्रावक-श्राविकाओं से खमाने का पाठ।

अढाई द्वीप पन्द्रह क्षेत्र में श्रावक-श्राविका दान देवें, शील पालें, तपस्या करें, शुद्ध भावना भावें, संवर करें, सामायिक करें, पोसह करें, प्रतिक्रमण करें, तीन मनोरथ चितवें, चौदह नियम चितारें, जीवादिक नव पदार्थ जानें, श्रावक के इक्कीस गुण करके युक्त, अनाथ, अपंग की दया करने वाले, एक व्रतधारी, जीव बारह व्रतधारी भगवन्त की आज्ञा में विचरें ऐसे वडों से हाथ जोड, पैर पड़ के क्षमा माँगता हूँ, आप क्षमा करें आप क्षमा करने योग्य हैं और छोटों से समुच्चय खमाता हूँ।

चौरासी लाख जीवयोनि को खमाने का पाठ।

सात लाख पृथ्वीकाय, सात लाख अप्काय, सात लाख तेउ-काय, सात लाख वायुकाय, दश लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख साधारण वनस्पतिकाय, दो लाख बेइन्द्रिय, दो लाख तेइन्द्रिय, दो लाख चउरिन्द्रिय, चार लाख देवता, चार लाख नारकी, चार लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय, चौदह लाख मनुष्य। ऐसे चार गति में चोरासी लाख जीवजोणी के सूक्ष्म वादर पर्याप्त, अपर्याप्त हालते-

चालते जीवों का उठते-बैठते जानते-अजानते किसी जीव को हनन किया हो, कराया हो, हन्ता के प्रति अनुमोदन किया हो, छेदा हो, भेदा हो, किलामणा उपजाई हो, मन वचन, काया करके अठारह लाख चौवीस हजार एक सो वीस (‡१८२४१२०) प्रकारे तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

कुल कोडी को खमाने का पाठ।

पृथ्वीकाय के बारह लाख कोडीकुल, अप्काय के सातलाख कोडीकुल, तेजस् (तेउ) कायके तीन लाख कोडीकुल, वायुकायके सात लाख कोडीकुल, वनस्पतिकाय के अट्ठाइस लाख कोडीकुल, द्वीन्द्रिय के सात लाख कोडीकुल, त्रीन्द्रिय के आठ लाख कोडीकुल, चतु-रिंद्रिय के नव लाख कोडीकुल, जलचर के साढे बारह लाख कोडी कुल, स्थलचर के दश लाख कोडीकुल, खेचर के बारह लाख कोडी-कुल, उरपर के दस लाख कोडीकुल, भुजपर के नव लाख कोडीकुल, नर्क के पच्चीस लाख कोडीकुल, देवता के छव्वीस लाख, मनुष्य के बारह लाख कोडीकुल, यों एक करोड साडीसंतानवे लाख कोडीकुल की विराधना की हो तो देवसी सम्बन्धी तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

नोट-‡ जीवतत्त्व के ५६३ भेदों को अभिहयादि दशों के साथ गुणा-कार करने से ५६३० भेद होते हैं। फिर इनको राग और द्वेष से द्विगुणा-कार करने से ११२६० भेद बनते हैं। फिर इन्हीं को मन, वचन, काया के साथ त्रिगुणा करने से ३३७८० भेद होतें हैं अपितु इनको ही तीन करणों के साथ सयोजन करने से १०१३४०भेद वन जाते हैं, अपितु इनको भी फिर तीन काल के साथ गुणाकार करने से ३०४०२० भेद हो जाते हैं। फिर इनको अर्हन्, सिद्ध, साधु, देव, गुरु और आत्मा इस प्रकार छः से गुणाकार करने पर १८२४१२० भेद बनते हैं अर्थात् इस प्रकार से मैं मिच्छा मि दुक्कडं देता हूँ और फिर पाप कर्म न करने की इच्छा करता हूँ ।

देवसिय-पायच्छित्त-विसोहणत्थं करेमि काउस्सग्गं।

देवसिय-दिवस सम्बन्धी। पायच्छित्त-पाप लगा हो, उसको। विसोहणट्ठं-विशुद्ध करने के लिए। करेमि-मैं करता हूँ। काउ-स्सग्गं-कायोत्सर्ग को।

समुच्चय पच्चक्खाण का पाठ।

गंठिसहियं, मुट्ठिसहियं, नमुक्कारसहियं, पोरिसियं साड्-ढपोरिसियं, (अपनी अपनी इच्छा अनुसार) तिविहं पि चउविहं पि, आहारं, असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सह-सागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तिआगारेणं ‡वोसिरामि।

शब्दार्थ—

गंठिसहियं-गाँठ सहित अर्थात् जब तक मैं गाँठ बँधी रक्खूं तब तक। मुट्ठिसहियं-मुट्ठिसहित अर्थात् जब तक मैं मुट्ठी बंधी रक्खूं तब तक। नमुक्कारसहियं-नमोक्कार मन्त्र बोल कर सूर्यो-दय से लेकर १ मुहूर्त्त (४८ मिनट) तक का त्याग। पोरिसिय-एक पहर तक का त्याग। साड्ढपोरिसियं-डेढ प्रहर तक का त्याग. अणत्थणाभोगेणं-बिना उपयोग के। सहसागारेणं-एकदम ध्यान न रहने से। महत्तरागारेणं-महापुरुष के आगार से अर्थात् महापुरुष के निमित्त से त्याग का भंग करना पडे तो इसका मेरे आगार है। सव्वसमाहि-वत्तिआगारेणं-सब प्रकार की शारीरिक नीरोगता रहे तब तक का। वोसिरामि-त्याग करता हूँ।

पहला सामायिक, दूसरा चौवीसत्थव, तीसरी वन्दना, चौथा प्रतिक्रमण, पांचवां कायोत्सर्ग, छट्ठा प्रत्याख्यान, यह छहों आव-

---

‡ स्वयं पच्चक्खाण करना हो तब वोसिरामि ऐसा बोलना चाहिये और दूसरों को पच्चक्खाण करना हो तो वोसिरे ऐसा बोलना चाहिए।

श्यक पूर्ण हुए, उनमें अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार, जानते, अजानते, कोई दोष लगा हो तथा पाठ उच्चारण करते समय काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, अधिक, न्यून, आगे, पीछे कहा हो तो देवसी सम्बन्धी तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

मिथ्यात्व का प्रतिक्रमण, अव्रत का प्रतिक्रमण, प्रमाद का प्रतिक्रमण, कषाय का प्रतिक्रमण, अशुभयोग का प्रतिक्रमण, एवं ५ प्रकार का प्रतिक्रमण नहीं किया हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

शम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा और आस्था सच्चे की श्रद्धा और झूठे का वारम्वार मिच्छा मि दुक्कडं।

भूतकाल का प्रतिक्रमण, वर्त्तमानकाल की सामायिक, भविष्यकाल का प्रत्याख्यान, ये तीन करते हैं, करवाते हैं, करने वालों को अनुमोदन देते हैं, उन पुरुषों को धन्य है। देव अरिहन्त, गुरु निर्ग्रन्थ, केवलिभाषित दयामय धर्म यह तीन तत्त्व सार। संसार, असार। भगवंत महाराज आपका मार्ग सच्चं! सच्चं!! सच्चं!!! थई थुई मंगलं।

आवश्यक [प्रतिक्रमण] सूत्र की विधि

धर्मस्थानक अथवा निरवद्य एकान्त स्थान में शुद्धतापूर्वक एक आसन पर बैठकर तीन वार तिक्खुत्तो के पाठ से शासनपति श्री महावीर स्वामी को या वर्त्तमान में अपने गुरुमहाराज को खड़ हो वन्दना करके चउवीसत्थव की आज्ञा लेकर चउवीसत्थव करें। चउवीसत्थव में प्रथम णमोक्कार मन्त्र कह कर क्षेत्रविशुद्धि के लिये इरियावहियं का पाठ और तस्स उत्तरी का पाठ कहके कायोत्सर्ग करें। कायोत्सर्ग में दो लोगस्स का ध्यान करें, मन में एक णमोक्कार मन्त्र बोलकर कायोत्सर्ग 'नमो अरिहन्ताणं' बोलकर ध्यान पूर्ण करें। फिर प्रकट चार ध्यान का पाठ (ध्यान में

मन, वचन, काया चलित हुये हों, आर्त्तध्यान रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्मध्यान, शुक्लध्यान न ध्याया हों तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं") बोलकर एक लोगस्स का पाठ बोलना चाहिये। तदनंतर दाहिना घुटना जमीन को लगाकर और बांया (डावा) घुटना खडा रखकर बैठे, दोनों हाथ जोडकर घुटने पर रख, दो वक्त नमोत्थुणं का पाठ कहना चाहिये।

तदनंतर श्री महावीर स्वामी की तथा गुरु महाराज की तिक्खुत्तो के पाठ से देवसिय प्रतिक्रमण ठाने की आज्ञा लेने के बाद इच्छामि णं भंते का पाठ और णमोक्कार मन्त्र का पाठ कहे, फिर तिक्खुत्तो का पाठ कह कर प्रथम आवश्यक की आज्ञा मांगे। प्रथम *आवश्यक में 'करेमि भन्ते' का पाठ बोलकर 'इच्छामि ठाएमि' का* पाठ और तस्स उत्तरी करणेणं का पाठ उच्चारण करके कायोत्सर्ग करे। कायोत्सर्ग में १४ ज्ञान के, ५ सम्यक्त्व के, ६० बारह व्रतों के, १५ कर्मादानके, ५ संलेखना के, एवं ९९ अतिचारों का, अठारह पापस्थानक का, इच्छामि ठामि का और णमोक्कार मन्त्र का पाठ मन में चिंतन करके कायोत्सर्ग पूर्ण करें। कायोत्सर्ग पालते समय, णमो अरिहन्ताणं यह शब्द प्रकट कहकर आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान आदि बोलके पहला आवश्यक पूर्ण करें। तत्पश्चात् 'तिक्खुत्तो' के पाठ से वंदना करके दूसरे आवश्यक की आज्ञा लेकर एक लोगस्स का पाठ कहे। पहला सामायिक, दूसरा चउवीसत्थव ये दो आवश्यक पूर्ण हुए। बाद 'तिक्खुत्तो' के पाठ से वन्दना करके तीसरे आवश्यक की आज्ञा लेना। तीसरे आवश्यक में 'इच्छामि खमासमणो' का पाठ दो वक्त बोलना चाहिए।

खमासमणा देने की विधि।

साधु-साध्वी हों तो उनके सन्मुख, न हों तो पूर्व तथा उत्तर

दिशा की तरफ खडा रह दोनों हाथ जोड कर खमासमणा का पाठ कहते हुये जहां 'निसीहियाए' शब्द आवे तब दोनों गोडे खडे करके दोनों हाथ जोड कर बैठें तथा ६ आवर्त्तन करें, सो इस प्रकार है। प्रथम 'अहो' कायं काय, यह शब्द उच्चारते ३ आवर्त्तन होते हैं, सो कहते हैं। दोनों हाथ लम्बे कर हाथ की दस अंगुलियां भूमि पर लगा के तथा गुरु चरण स्पर्श करके मुंह से 'अ' अक्षर नीचे स्वर से कहे, फिर ऐसे ही दस अगुलियां अपने मस्तक पर लगाके "हो" अक्षर ऊँचे स्वर से कहे, ये दोनों अक्षर कहने से पहिला आवर्त्तन होता है और इस प्रकार "का" और 'य" ये दो अक्षर उच्चारण करते दूसरा आवर्त्तन हुआ, इस तरह "कां" और "य" यह दो अक्षर कहने से तीसरा आवर्त्तन हुआ। फिर जत्ता' भे जवणिज्जं च भे शब्द उच्चारण करते हुए ३ आवर्त्तन होते हैं वे इस तरह हैं। प्रथम 'ज' अक्षर मंद स्वरसे 'त्ता" अक्षर मध्यम स्वर से और "भे" अक्षर उच्च स्वरसे, इस तरह से ऊपर मुजब बोले, ये तीन अक्षर बोलने से प्रथम आवर्त्तन हुआ और इसी प्रकार "ज, व, णि" ये तीन अक्षर त्रिविध स्वर से ऊपर मुजब कहने से दूसरा आवर्त्तन हुआ तथा इसी प्रकार 'ज्जं, च, भे" ये तीन अक्षर त्रिविध स्वर से पूर्ववत् बोलने से तीसरा आवर्त्तन हुआ, एवं ३ + ३ = ६ आवर्त्तन एक पाठ में बोले और जब 'तित्तीसन्नयराए" शब्द आवे तब खडा होकर पाठ समाप्त करे। इसी मुताबिक खमासमणो का दूसरा पाठ बोले। उसमें भी ६ आवर्त्तन पूर्ववत् कहे। दोनों वक्त में १२ आवर्त्तन होते हैं। दूसरा पाठ बैठे २ ही पूरा कहना इस प्रकार दो खमासमणा देकर पहिला सामायिक, दूसरा चउवीसत्थव, तीसरी वन्दना, ये तीन आवश्यक पूरे हुए ऐसा कहकर चौथे आवश्यक की तिक्खुत्तोके पाठसे आज्ञा लेना।

अपने आसन पर खड़ा रहकर 'आगमे तिविहे' का पाठ 'दंसण समकित' का पाठ, अतिचार-सहित बारह व्रत पूर्ण कहने के बाद पर्यङ्कासन (पालथी) से नीचे बैठे, दोनों हाथ जोड मस्तक पर दसों अंगुलियाँ स्थापन कर 'संलेखना' का पाठ कहके 'समुच्चय' पाठ बोले। तदनन्तर 'अठारह पापस्थानक' का पाठ, 'चउदहस्थान सम्मूर्च्छिम मनुष्य' का पाठ, 'पच्चीस मिथ्यात्व का पाठ और इच्छामि (ठामि) 'पडिक्कमिउं' का पाठ कहना चाहिये।

तिक्खुत्तो के पाठ से विधिपूर्वक वन्दना नमस्कार करके "श्रमण सूत्र" कहने की आज्ञा ग्रहण कर, डावा घुटना नीचे दबाना और दाहिना घुटना खडा रखकर उस पर दोनों हाथ जोडकर रक्खें उसके बाद 'णमोक्कार मन्त्र' का पाठ, करेमि भंते का पाठ पढ़कर 'चत्तारि मंगलं' का पाठ बोले। तत्पश्चात् 'इच्छामि (ठामि) ठाइउं' का पाठ, तथा 'इरियावहियं' का पाठ कहना चाहिये। इसके बाद 'निद्रादोषनिवृत्ति' का पाठ, भिक्षादोष निवृत्ति का पाठ 'स्वाध्याय तथा प्रतिलेखन दोष निवृत्ति' का पाठ, 'तैंतीस बोल' का पाठ कहना चाहिये। तदनन्तर दोनों घुटने खडे रख, दोनों हाथ जोड़कर सिर झुकाते हुये 'निर्ग्रन्थ' का पाठ कहना। 'अब्भुट्ठिओमि" शब्द से आगे का पाठ खडा रहकर हाथ जोडकर बोलना इसके बाद तीसरे आवश्यक में कही हुई विधि के अनुसार दो वक्त खमासमणा का पाठ कहना फिर तिक्खुत्तो के पाठसे सविधि वंदना करके पांचों पदों को भाव वन्दना करने की आज्ञा ग्रहण करना, फिर णमोक्कार मन्त्र कहते हुये दोनों घुटने जमीन को लगाकर दोनों हाथ जोडकर मस्तक पर रखकर नीचे झुके हुए रहकर पाँचों पदों को वन्दना करना। तदनंतर शक्ति हो तो खडे होकर नहीं तो बैठे हुए 'अनन्त चोवीसी जिन नमुं, आदि दोहे कहकर खमत-खामना

का पाठ कहना, पश्चात् सर्व श्रावक-श्राविका से खमाने का पाठ, चोरासी लाख जीवयोनि खमाने का पाठ, कुलकोडी खमाने का पाठ और अठारह पापस्थानक का पाठ बोले। फिर पहला सामायिक दूसरा चउवीसत्थव, तीसरा वन्दना, चौथा प्रतिक्रमण, ये चार आवश्यक पूरे हुए। बाद खडे होकर पांचवें आवश्यक की तिक्खुत्ता के पाठ से विधिपूर्वक आज्ञा लेकर "देवसिय पायच्छित्त विसोहणट्ठं करेमि काउस्सग्गं" कहकर णमोक्कारमन्त्र, करेमि भन्ते का पाठ, इच्छामि ठाएमि, काउस्सग्गं का पाठ और 'तस्स उत्तरीकरणेणं' का पूर्ण पाठ कहकर कायोत्सर्ग करना। कायोत्सर्ग में देवसिक और राइसिक प्रतिक्रमण में ४ लोगस्स, पक्खिय (पाक्षिक) प्रतिक्रमण में १२ लोगस्स, चौमासी प्रतिक्रमण में २० लोगस्स और संवत्सरी प्रतिक्रमण में ४० लोगस्स का कायोत्सर्ग‡ करना, एक णमोक्कार मन्त्र कहते हुए कायोत्सर्ग पालकर फिर चार ध्यान का पाठ कहना, फिर प्रगट एक लोगस्स कहकर दो खमासमणा विधिसहित देवें। पहला सामायिक, दूसरा चउवीसत्थव, तीसरी वन्दना, चौथा प्रतिक्रमण, पांचवां कायोत्सर्ग, ये पांच आवश्यक पूर्ण हुए बाद छट्ठे आवश्यक का भी, धन्य श्री महावीर स्वामी, अन्तर्यामी, ऐसा कहे। छट्ठे आवश्यक में साधुजी महाराज विराजित हों तो उनको तिक्खुत्ता के पाठ से विधिपूर्वक वन्दना नमस्कार कर उनके सम्मुख खडा हो दोनों हाथ जोड अपने मन में धारण करना कि आज रात्रि में आहार करने का प्रत्याख्यान

---

‡कॉन्फरन्स के नियमानुसार रायसिक, देवसिक, प्रतिक्रमण मे ४ पक्खी प्रति० में चोमासी में १२, संवत्सरी मे २० लोगस्स का ध्यान करते है।

करता हूं कदाचित् पानी पिये बिना नहीं चलता हो तो पानी को छोडकर तीनों आहार और आधी रात्रि के उपरान्त चारों आहार का प्रत्याख्यान करता हूं। सूर्योदय होने के बाद न मोक्कारसी, (दो घडी अर्थात् ४८ मिनट दिन आवे वहां तक) पोरसी अर्थात् प्रहर दिन आवे वहां तक इत्यादि) प्रत्याख्यान की धारणा शक्ति के अनुसार करें। तथा वे न हों तो बडे श्रावक के मुख से प्रत्याख्यान, पच्चक्खाण के पाठ से प्रत्याख्यान कर लेना, फिर पहला सामायिक, दूसरा चउवीसत्थव आदि कहकर, मिथ्यात्व का प्रतिक्रमण आदि कहना।

फिर नीचे बैठकर डावा गोडा ऊँचा रखके दोनों हाथ मस्तक पर रखकर दो वक्त नमोत्थुणं पूर्वोक्त विधि से बोल के जो साधु मुनिराज विराजते हों उनको तिक्खुत्ता के पाठ से तीन दफे विधिसहित वन्दना नमस्कार करके, तथा कोई साधु मुनिराज न विराजते हों तो पूर्व तथा उत्तर दिशा की तरफ मुंह करके श्री महावीर स्वामी को तथा धर्माचार्य (धर्मगुरु) को वन्दना नमस्कार करके सर्व स्वधर्मी भाइयों के साथ खमतखामणा अन्तःकरण से करें, बाद चोवीसी स्तवन उच्चारण करें। प्रतिक्रमण में जहां देवसिय शब्द आवे वहां देवसिय संबंधी, राइसिय प्रतिक्रमण में राइसिय संबंधी, पक्खी प्रतिक्रमण में, पक्खी संबंधी, चौमासी प्रतिक्रमण में चौमासी संबंधी और संवत्सरी प्रतिक्रमण में संवत्सरी सम्बन्धी कहे।

इति आवश्यक सूत्र विधिसहित सम्पूर्ण

शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

प्रातःकाल में कहने के लिए चौवीसी।

श्री आदि जिनन्दं, समरसकंदं, अजित दिनंदं, भज प्राणी। संभव, जगत्राता, शिवमगराता, द्यो सुखसाता, हित आणी। अभिनन्दन देवा, सुमति सुसेवा, करो नितमेवा, रिपुघाता। चोवीस जिनराया, मन वच काया, प्रणमुं पाया, द्यो साता ॥ टेर ॥१॥ श्री पद्मसुपासं, शशिगुणरासं, सुविधि सुवासं, हितकारी। श्री शीतलस्वामी, अन्तरजामी, शिवगतिगामी, उपकारी। श्रेयांस दयाला, परमकृपाला, भविजनवाला, जगत्राता ॥ चो० ॥ २ ॥ वासुपूज्य सुकंतं, विमल अनंतं, धर्म श्रीसंतं संतकारी। कुंन्थुं अरनाथं, तजं जग साथं, मल्ली सुआथं संगधारी ॥ मुनिसुव्रत सुनमि, आत्माने दमी, दुर्मतिने वमी, तपरीता ॥ चो० ॥ ३ ॥ रिष्टनेमि, बड़ाई, नार न व्याही, तोरण जाई, छटकाई। नाग नागण तांई, दिया बचाई पारस सांई सुखदाई। जय जय वर्द्धमानं, गुणनिधि खानं, त्रिजग भानं, शुद्ध आता ॥ चो० ॥ ४ ॥ संसार का फंदा, दूर निकंदा धर्म का छंदा जिन लीना। प्रभु केवल पाया, धर्म सुनाया, भव समझाया, मुनि कीना। कहे रिख तिलोकं, सदा तस धोकं, द्यो सुखथोकं, चित्तचाता ॥ चो० ॥५॥ इति ॥

सायंकाल में कहने के लिए चौवीसी।

साहेबभले विराज्याजी, चौवीसी महाराज मुक्ति में भले विराज्याजी ॥ टेर ॥ ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपास। चन्दा प्रभुजी ने सुविधि जिनेश्वर, शीतल द्यो

शिववास ॥सा०॥१॥ श्री श्रेयांस वासुपूज्य समरो, विमल विमल मतिवन्त । अनन्तनाथ प्रभु धर्म जिनेश्वर, शान्ति करो श्रीसंत ॥ ॥ सा ० ॥ २ ॥ कुन्थुनाथ प्रभु करुणासागर, अरनाथ जगदीश । मल्लिनाथ श्री मुनिसुव्रतजी, नित्य नमाऊँ शीष ॥ सा० ॥३॥ एकविशमा नेमिनाथ निरुपम, रिष्टनेमि जगधार । तोरण से पाछा फिर्या प्रभु शिवरमणी भरतार ॥ सा० ॥ ४ ॥ पारस सरिखा प्रभुजी, नावारस का नाथ । वर्द्धमान शासन का स्वामी, प्रणमूं जोडी हाथ ॥ सा० । ।५ ॥ तुम बिन पाये दुःख अनन्ता; जनम मरण जंजाल । तिलोकरिख कहे जिम तिम करिने तारो दीन-दयाल ॥ सा० ॥ इति ॥

ग्यारह गणधरों का स्तवन

श्री इंद्रभूतिजी का लीजे नाम, तो मनवांछित सीझे काम । मोटा लब्धिणा भण्डार, वन्दूं इग्यारे गणधार ॥ १ ॥ अग्निभूति गौतमजी का भाई, वीरजी ने दीठा समता आई । ऋद्धि, त्याग लियो संयम भार ॥ वन्दूं ॥ २ ॥ वायुभूति मोटा मुनिराय, ये तीनों सगा भाय । पाँच-पांच से निकल्या लार ॥ वन्दूं० ॥ ३ ॥ विगत स्वामीजी चोथा जाण, भजन किया मिले अमर विमान । देवलोक सुखरा झणकार ॥ वंदूं० ॥ ४ ॥ स्वामी सुधर्मा वीरजी रे पाट, जन्म मरण सेवक ना काट । मुझने आप तणो आधार ॥ वन्दूं ॥ ५ ॥ मंडीपुत्र नें मोरीपुत, मुक्ति जावणरो कर दियो सूत । त्रिविधे त्यागा पाप अढार ॥ वंदूं० ॥ ६ ॥ अकंपित ने अचल भ्रात, वीर जीरे वचनें रहयाज रात । चउदे पूरवना भंडार ॥ वंदूं० ॥ ७ ॥ मेतारज ने श्री परभास मोक्षनगर में कर दिया

वास । जपता होवे जय जय कार ॥ वंदूं० ॥ ८ ॥ ये इग्यारे उत्तम जात, चुम्मालीसे निकल्या साथ । ज्या कर कीनो खेवा पार ॥ वंदूं० ॥ ९ ॥ इण नामे सहु आशा फले, दोषी दुश्मन दूर टले, ऋद्धि वृद्धि पामे सुख सार ॥ वंदूं० ॥ १० ॥ इणनामे सब नासे पाप, नित्य रो जपिए भवियण जाप । चित्त चोख हिरदा में धार ॥ वंदूं० ॥ ११ ॥ संमत अठारे तियालीसे जाण, पूज्य जयमलजीरी अमृत वाण । चोमासे स्तवन कियो पियार ॥ वन्दूं० ॥ १२ ॥ आषाढ शुद सातमरे दिन, गणधरजी ने गाया एक मन । आशकरणजी भणे अणगार ॥ वन्दूं ॥ इति ॥

प्रतिक्रमण विषयक पद्य ।

कर पडिक्कमणो भावसुं दोय घडी शुभ ध्यान लालरे । परभव जाता जीवने संवल साचो जान लालरे ॥क०॥१॥ श्रीमुख वीर समुच्चरे, श्रेणिक राय प्रतिबोध लालरे । गोत्र तीर्थंकर बांधने पावे मुक्तिनो शोध लालरे ॥क०॥२॥ लाख खण्डी सोना तणी देव नित प्रति दान लालरे । दो टंक पडिमणो करे, नहीं आवे तेह समान लालरे ॥ क० ॥ ३ ॥ लाख वरस लग ते वली, दीजे दान अपार लाल रे । एक सामायिक ना तोले, न आवे तेह लगार लालरे ॥ क० ॥ ४ ॥ सामायिक चउवीसत्थव, वन्दन दोय दोय वार लालरे । व्रत सम्भालो आपना, किया जो कर्म अपार लालरे ॥ क० ॥ ५ ॥ कर काउसग्ग शुभ ध्यान थी दीन में दोय दोय वार लालरे । करो सज्झाय ते वली, टाली सब अतिचार लालरे ॥ क० ॥६॥ गोत्र तीर्थंकर निर्मलो, करतो बांधे दिन-रात

लालरे। कर्म तणी कोडी खपे, टले सकल व्याघात लालरे॥क०॥७॥ दोय वखत नित्य कीजिए, पडिकमणो शुद्ध चित्त लालरे। लीला लहर मिले मिले, अविचल गति में नित लालरे॥ क० ॥ ८ ॥ सामायिक परसादथी पामे अमर विमान लालरे। धर्मसिंह मुनिवर कहे, मुक्ति तणो छे निधान लालरे॥क०॥९॥ इति॥

उपदेशी पद्य।

भूलो मन भमरा काइ भम्यो, भमियो दिवसने रात। मायारो लोभी प्राणियो, मनरे दुर्गति जात॥भू०॥१॥कुम्भ काचोरे माया कारमी देहना करो रे जतन। विनसती वार लागे नहीं, निर्मल राखोरे मन॥ भू० ॥ २ ॥ मूरख कहे धन माहरो, ते धन खरचे न खाय। वस्त्र बिना जाई सुइवो, लखहति लकडी के माथ॥ भू० ॥ ३ ॥ केहना छोरूरे केहना वाछरू, केहवा मायने बाप। ओ प्राणी जासी एकलो, साथे पुण्यने पाप॥ भू० ॥ ४ ॥ आशा तो डुङगर जेवडी मरणो पगला रे हेट। धन संची संची कांइ करो, करो सद्गुरु भेट॥ भू० ॥ ५ ॥ लखपति छत्रपति सहुं गया, गया लाख वेलाख। गर्व करी गोखे बेसता जल जल हो गई राख॥ भू० ॥ ६ ॥ भवसागर दुःख जल भम्यो तिरवो जीवडा तेह। बीच में ग्रह सवलो अर्ज करो प्रभुजीसुं नेह॥ भू० ॥ ७ ॥ धंदो करी धन जोडियो, लाखा ऊपर करोड। मरणारी लेला मानवी लेसी कदोरो तोड॥ भू० ॥ ८ ॥ जाय प्राणी वासो वस्यो कांइ न चालरे लार। हाड जले ज्यूं लाकडी केस जले ज्यों घास ॥ भू० ॥ ९ ॥ लाख चौरासी तूं भम्यो

भमियो अनन्ती काय । दया धरम पाल्यो नहीं ज्युं आयो त्युं जाय, ॥ भू० ॥१०॥ उलट नदी सागर चालनो, जानो पेलेरे पार । आगल नहीं हाट वाणिया संबल लीजोरे लार ॥भु०॥११॥ म्हा-रोरे म्हारो कर रह्यो थारो कोई लगार । कुण थारो तू केहनो जोवो हिवडे विचार ॥ भू० ॥ १२ ॥ मैंमद कहे समझो सहुं, संबल लीजोरे साथ । आपनो लाभ उवारिये लेखो साहिब हाथ ॥ भू० ॥ १३ ॥ इति ॥

प्रश्नोत्तर

प्रश्न	उत्तर
१–प्रतिक्रमण का अर्थ क्या ?	दुष्कृत्यों से पीछे हटना
२–प्रतिक्रमण कितने प्रकार का ?	पांच प्रकार का प्रतिक्रमण होता है, जैसे मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग का प्रतिक्रमण
३–कौन सा ऐसा पाठ है जिसमें– सब प्रतिक्रमण का सार आ जाता है?	इच्छामि णं ठामि काउसग्गं जो मे
४–ज्ञान के अतिचार कितने है ?	१४, जं वाइद्धं वच्चामेलियं इत्यादि
५–दर्शन के कितने हैं ?	५ संका, कंखा, वितिगिच्छा वगैरह
६–सब अतिचार कितने होते हैं ?	९९,
७–श्रावक के वारह व्रत में जीवनो-पयोगी सारी बातें आ जाती हैं ?	हाँ,
८–पौषधव्रत किस पाठ से लिया जाता है?	ग्यारहवें व्रत के पाठ से
९–साधु को कितने प्रकार से दान– दिया जाता है ? और किस पाठ में वर्णन है ?	१४ प्रकार का, जैसे असणं पाणं खाइमं साइमं वत्थपडिग्गहं कंबलं– इत्यादि वारहवें व्रत के पाठ में
१०–बारहवव्रत में मूलव्रत, गुणव्रत, शिक्षाव्रत, कितने और कौन से है ?	५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत
११–मूलव्रत में भी सर्व श्रेष्ठ व्रत कौन– सा है ?	अहिंसा, इसका सबसे साथ संबन्ध है।
१२–छट्ठे व्रत में और दसवें व्रत में क्या– अन्तर है ?	छट्ठा दिशाव्रत जावज्जीव के लिये है और दसवाँ प्रतिदिन के लिए
१३–कितने प्रकार का परिग्रह है ?	९ प्रकार का, खेत्त[1], वत्थु[2] हिरण्ण[3] सुवण्ण[4] धन[5] धान्य[6] द्विपद[7] चउप्पद[8] कुवियधातु[9]
१४–प्रतिक्रमण कितने नाम लेकर– किया जाता है ?	पाँच, देवसी, रायसी, पक्खी चातुर्मासिक, संवत्सरी।

आवश्यक की विधि का कोष्टक

प्रतिक्रमण (आवश्यक)

१	२	३	४	५	६
सामायिक,	चउवीसत्थव,	वंदना,	प्रतिक्रमण,	काउस्सग्गा	प्रत्याख्यान
सामायिक का पाठ उच्चारण करना	(लोगस्सका) (पाठ)	क्षमापना का पाठ बोलना		लोगस्स या धर्मध्यानका काउस्सग करे.	तिविहार चौविहार का और कोई नियम करे

प्रतिक्रमण में आगमे तिविहे का पाठ, दर्शन समकित का पाठ, १२ व्रत, संलेखना का पाठ, १८ पाप स्थानक, १४ संमूर्च्छिम, २५ मिथ्यात्व, करेमि भंते का पाठ, वंदन करके मांगलिक का पाठ, फिर श्रमण सूत्र बोलने वाले सभी इच्छामि पडिक्कमिउं पगाम सज्झाए में सभी पाठ एक से लेकर तेंतीस पाठ तक बोले। नमो चउविसाए का पाठ बोलकर खमत खामणा का पाठ बोलकर पाप बोझ से हलके होने के बाद पांचो पदों का गुणानुवाद करे।

परीक्षार्थियों से

शरीर के लिये खुराक जितनी आवश्यक वस्तु है, आत्मा के लिए धार्मिक (आध्यात्मिक) शिक्षण उतना ही जरूरी है। धार्मिक शिक्षा को व्यवस्थित रूप देने के लिए और शिक्षणसंस्थाओं में एकता लाने के लिए ही 'श्री तिलोक-रत्न-स्थानकवासी-जैन-धार्मिक-परीक्षा बोर्ड' पाथर्डी की स्थापना हुई है। संस्थाएँ परीक्षा बोर्ड में अधिकाधिक संख्या में छात्रों को सम्मिलित करा रही हैं और छात्र भी इस दिशा में विशेष उत्साह दिखा रहे हैं, यह समाधान का विषय है। परीक्षार्थियोंकी सुविधा के लिए बोर्डने 'पुस्तक-प्रकाशन-विभाग' स्थापित किया है। छात्रों को इस विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तकों से यथेष्ट लाभ उठाना चाहिये।

मन्त्री:—*पुस्तक प्रकाशन विभाग*
श्री तिलोक रत्न स्थानकवासी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड
पाथर्डी, (अहमदनगर)

'सुधर्मा—मासिक—पत्रिका'

परीक्षार्थियों के ज्ञान—विकासार्थ इस पत्रिका का प्रकाशन परीक्षा बोर्ड द्वारा प्रारंभ किया गया है। छात्रों के लिये वार्षिक शुल्क ५) ही रखा गया है।

पता—मु पो. पाथर्डी, (अहमदनगर)